परिषद के मामले में 30 वर्ष से कम उसकी आयु नहीं होनी चाहिए।

- संसद द्वारा निर्धारित अन्य योग्यताएं भी उसमें होनी चाहिए।
- विधानसभा सदस्य बनने वाला व्यक्ति संबंधित राज्य के निर्वाचन क्षेत्र में भी होना चाहिए।

अयोग्यताएं

राज्य विधानमण्डल के सदस्य बनने पर संविधान के तहत उस व्यक्ति को निम्नलिखित कारणों से अयोग्य घोषित किया जा सकता है–

- संसद द्वारा निर्मित किसी कानून के तहत उसे अयोग्य करार दिया गया हो।
- यदि वह केंद्र या राज्य सरकार के तहत किसी लाभ के पद पर है।
- यदि उसे कानूनी तौर पर पागल घोषित किया गया हो।
- यदि वह दिवालिया हो।

दल-बदल के आधार पर अयोग्यता

राज्य विधानमंडल के सदस्य को संविधान में 10वीं अनुसूची में दल-बदल के कारण उसे अयोग्य ठहराने की व्यवस्था है। 10वीं अनुसूची के तहत यदि अयोग्यता का मामला उठे तो विधानपरिषद के मामले में सभापति एवं विधानसभा के मामले में अध्यक्ष (राज्यपाल नहीं) फैसला करेगा।

स्थानों का रिक्त होना

निम्नलिखित मामलों में विधानमंडल सदस्य का पद रिक्त हो जाता है –

- **दोहरी सदस्यता:** एक व्यक्ति एक समय में विधानमंडल के दोनों सदनों का सदस्य नहीं हो सकता।
- **अयोग्यता:** राज्य विधानमंडल का कोई सदस्य यदि अयोग्य पाया जाता है, तो उसका पद खाली हो जाएगा।
- **त्यागपत्र:** कोई सदस्य अपना लिखित इस्तीफा विधान परिषद के मामले में सभापति और विधानसभा के मामले में अ ध्यक्ष को दे सकता है। त्यागपत्र स्वीकार होने पर उसका पद रिक्त हो जाएगा।
- **अनुपस्थिति:** यदि कोई सदस्य बिना पूर्व अनुमति के 60 दिन तक बैठकों से अनुपस्थित रहता है तो सदन उसके पद को रिक्त घोषित कर सकता हैं।
- **अन्य मामले:** किसी सदस्य का पद रिक्त हो सकता है–
  - यदि वह किसी राज्य का राज्यपाल निर्वाचित हो जाए।
  - यदि उसे सदन से निकाल दिया जाए।
  - यदि वह राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के पद पर निर्वाचित हो जाए और।
  - यदि न्यायालय द्वारा उसके निर्वाचन को अमान्य ठहरा दिया जाए।

विधानमंडल के पीठासीन अधिकारी

राज्य विधानमंडल के प्रत्येक सदन का अपना पीठासीन अधिकारी होता है। विधानसभा के लिए अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष और विधानपरिषद के लिए सभापति एवं उप सभापति होता है।

विधानसभा अध्यक्ष

विधानसभा के सदस्य अपने सदस्यों के बीच से ही अध्यक्ष का निर्वाचन करते हैं। सामान्यत: विधानसभा के कार्यकाल तक अध्यक्ष पदासीन रहता है। हालांकि समय से पूर्व भी वह निम्नलिखित मामलों में अपना पद छोड़ सकता है–

- यदि विधानसभा के तत्कालीन सदस्यों द्वारा प्रस्ताव पास कर उसे हटा दिया जाए।
- यदि उसकी विधानसभा सदस्यता समाप्त हो जाए।
- यदि वह उपाध्यक्ष को अपना त्यागपत्र दे दे और।

अध्यक्ष की निम्नलिखित शक्तियां एवं कार्य होते हैं-

- प्रथम मामले में वह मत नहीं देता लेकिन बराबर मत होने की स्थिति में वह फैसला देने के लिए ऐसा कर सकता है।
- सदन के नेताओं के आग्रह पर वह विशेष बैठक को अनुमति प्रदान कर सकता है।
- वह इस बात का निर्णय कर सकता है कि कोई विधेयक धन विधेयक है या नहीं। इस प्रश्न पर उसका निर्णय अंतिम होगा।
- दसवीं अनुसूची के आधार पर किसी सदस्य की अयोग्यता को लेकर उठे किसी विवाद पर वह फैसला दे सकता है।
- कार्यवाही एवं अन्य कार्यों को सुनिश्चि करने के लिए वह व्यवस्था एवं शिष्टाचार बनाए रखता है।
- कोरम के पूरा न होने पर वह विधानसभा की बैठक को स्थगित या निलंबित कर सकता है।

विधानसभा उपाध्यक्ष

अध्यक्ष की तरह ही विधानसभा के सदस्य उपाध्यक्ष का चुनाव भी अपने बीच से ही करते हैं। अध्यक्ष की ही तरह उपाध्यक्ष भी विधानसभा के कार्यकाल तक पद पर बने रहता है, हालांकि समय से पूर्व भी निम्नलिखित तीन मामलों में पद रिक्त हो सकता है–

- यदि विधानसभा सदस्य बहुमत के आधार पर उसे हटाने का प्रस्ताव पास करे दे।
- यदि उसकी विधानसभा सदस्यता समाप्त हो जाए।
- यदि वह अध्यक्ष को इस्तीफा लिख दे और

विधान परिषद का सभापति

विधान परिषद के सदस्य अपने बीच से ही सभापति को चुनते हैं। सभापति का पद निम्नलिखित तीन मामलों में रिक्त हो सकता हैं :–

- यदि विधानपरिषद में उपस्थित तत्कालीन सदस्य बहुमत से उसे हटाने का प्रस्ताव पास कर दें।
- यदि परिषद से उसकी सदस्यता समाप्त हो जाय।

यदि वह उप सभापति को लिखित इस्तीफा दे दे, और

विधान परिषद का उपसभापति

सभापति की तरह ही उप सभापति को भी परिषद के सदस्य अपने बीच से चुनते हैं। उप सभापति का पद निम्नलिखित तीन मामलों में रिक्त हो सकता हैं–

- यदि परिषद के तत्कालीन सदस्य बहुमत से उसके खिलाफ प्रस्ताव पास करे दें।
- यदि वह सभापति को इस्तीफा दे दे, और।
- यदि परिषद के सदस्य उसे हटा दें।

राज्य विधानमंडल का सत्र

सत्र (बैठक) के लिए बुलावा

राज्य विधानमंडल के प्रत्येक सदन को राज्यपाल समय-समय पर बैठक का बुलावा भेजता है। दोनों सत्रों के बीच छह माह से अधिक का समय नहीं होना चाहिए।

स्थगन

बैठक को विशेष काल के लिए स्थगित भी किया जा सकता है। यह समय घंटों, दिनों या हफ्तों का भी हो सकता है।

विघटन

एक स्थायी सदन के होने के नाते विधानपरिषद का विघटन नहीं हो सकता। सिर्फ विधानसभा का विघटन हो सकता है। स्थगन के विपरीत विघटन के तहत चालू सदन समाप्त हो जाता है और आम चुनाव के बाद नए सदन का निर्माण होता है। विधानसभा के विघटन होने पर विधेयकों के खारिज होने को हम इस प्रकार समझ सकते हैं-

- एक विधेयक विधानसभा द्वारा पारित हो (एक सदनीय विधानमंडल वाले राज्य में) या दोनों सदनों द्वारा पारित हो (बहु सदनीय व्यवस्था वाले राज्य में) लेकिन राष्ट्रपति द्वारा सदन के पास पुनर्विचार हेतु लौटाया गया हो को समाप्त नहीं किया जा सकता।
- विधानसभा द्वारा पारित लेकिन विधानपरिषद में लंबित विधेयक खारिज हो जाता है।
- विधानसभा में लंबित (Pending) पड़ा विधेयक खारिज हो जाता है।
- एक विधेयक जो विधानपरिषद में लंबित हो लेकिन विधानसभा द्वारा पारित न हो, को खारिज नहीं किया जा सकता।

कोरम (गणपूर्ति)

किसी भी कार्य को शुरू करने से पूर्व सदस्यों की एक न्यूनतम संख्या को कोरम कहते हैं। सदन में कुल सदस्यों का दसवां हिस्सा (कार्यकारी अधिकारियों सहित) होता है जो कभी ज्यादा भी हो सकता है।

सदन में मतदान

किसी भी सदन की बैठक में कार्यकारी अधिकारियों को छोड़कर तय किए गए सभी मामलों को बहुमत के आधार पर तय किया जाता है। केवल कुछ मामले जिन्हें विशेष रूप से संविधान में तय किया गया है जैसे विधानसभा अध्यक्ष को हटाना या विधानपरिषद के सभापति को हटाना इनमें सामान्य बहुमत की बजाय विशेष बहुमत की आवश्यकता होती है।

विधानमंडल में भाषा

विधानमंडल में कामकाज संपन्न कराने के लिए संविधान कार्यालयी भाषा या उस राज्य के लिए हिंदी अथवा अंग्रेजी की घोषणा करता है। हालांकि विधायी अधिकारी किसी सदस्य को अपनी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुमति दे सकता है।

मंत्रियों एवं महाधिवक्ता के अधिकार

प्रत्येक मंत्री एवं महाधिवक्ता को यह अधिकार है कि वह सदन की कार्यवाही में भाग ले, बोले एवं सदन से संबद्ध समिति जिसके लिए वह सदस्य रूप में नामित है, वोट देने के अधिकार के बिना भी भाग ले।

- एक मंत्री जो सदन का सदस्य नहीं है, दोनों सदनों की कार्यवाही में भाग ले सकता है।

विधानमंडल में विधायी कार्यपद्धति

साधारणा विधेयक

- **सदन में बने विधेयक:** एक साधारण विधेयक विधानमंडल

के किसी सदन में निर्मित हो सकता है। विधेयक तीन स्तरों के बाद पारित होता है–

- प्रथम वाचन
- द्वितीय वाचन
- तृतीय वाचन

- **दूसरे सदन में विधेयक :**

दूसरे सदन में भी विधेयक उन तीनों स्तरों के बाद पारित होता है। जब कोई विधेयक विधानसभा से पारित होने के बाद विधानपरिषद में भेजा जाता है, तो वहां तीन विकल्प होते हैं–

- इस पर कोई कार्यवाही न की जाए और विधेयक को विचाराधीन रखा जाए।
- कुछ संशोधनों के बाद पारित कर विचारार्थ इसे विधानसभा को भेज दिया जाए।
- इसे उसी रूप में (बिना संशोधन के) पारित कर दिया जाए।
- विधेयक को अस्वीकृत कर दिया जाए।

साधारण विधेयक पारित करने के संदर्भ में विधानसभा को खास शक्ति प्राप्त है। ज्यादा से ज्यादा परिषद एक विधेयक को चार माह के लिए रोक सकती है। पहली बार में तीन माह के लिए और दूसरी बार में एक-माह के लिए। संविधान में किसी विधेयक पर असहमति होने के मामले में दोनों सदनों की संयुक्त बैठक का प्रावधान नहीं रखा गया है।

राज्यपाल की स्वीकृति

विधानसभा या द्विसदनीय व्यवस्था में दोनों सदनों द्वारा पारित होने के बाद प्रत्येक विधेयक राज्यपाल के समक्ष मंजूरी के लिए भेजा जाता है। राज्यपाल के पास चार विकल्प होते हैं–

- वह राष्ट्रपति के विचारार्थ विधेयक को सुरक्षित रख ले।
- वह विधेयक को अपनी मंजूरी देने से रोके रखे।
- वह सदन या सदनों के पास विधेयक को पुनर्विचार के लिए भेज दे, और
- वह विधेयक को मंजूरी प्रदान कर दे।

राष्ट्रपति की मंजूरी

यदि कोई विधेयक राज्यापाल द्वारा राष्ट्रपति की मंजूरी के लिए सुरिक्षत रखा जाता है तो राष्ट्रपति या तो अपनी मंजूरी दे देते हैं, उसे रोक सकते या विधानमंडल के सदन या सदनों को पुनर्विचार हेतु भेज सकते हैं।

वित्त विधेयक

राज्य विधानमंडल में वित्त विधेयक को पारित करने के मामले में संविधान में विशेष व्यवस्था है। यह निम्नलिखित है– वित्त विधेयक विधानपरिषद में पेश नहीं किया जा सकता। यह केवल विधानसभा में ही राज्यपाल की संस्तुति के बाद पेश किया जा सकता है इस तरह का कोई भी विधेयक सरकारी विधेयक होता है और सिर्फ एक मंत्री द्वारा पेश किया जा सकता है। विधानसभा द्वारा पारित होने बाद एक वित्त विधेयक को विधानपरिषद को विचारार्थ भेजा जाता है। विधानपरिषद के पासे इसके मामले में प्रतिबंधित शक्तियां हैं। वह न तो इसे अस्वीकार कर सकता है, न ही इसमें संशोधन कर सकता है। उसे इसमें संस्तुति देनी होती है और 14 दिनों में विधेयक को लौटाना भी होता है। विधानसभा इसके सुझावों को स्वीकार भी कर सकती है और खारिज भी।

अंतत: जब एक वित्त विधेयक राज्यपाल के समक्ष पेश किया जाता है तब वह इस पर अपनी मंजूरी दे सकता है, इसे रोक सकता है या राष्ट्रपति की मंजूरी के लिए सुरक्षित रख सकता है लेकिन राज्य विधानमंडल के पास पुनर्विचार के लिए नहीं भेजा सकता।

राज्य विधानमंडल एवं संसद के बीच कानूनी प्रक्रिया की तुलना

साधारण विधेयक के संबंध में

संसद	राज्य विधानमंडल
• यह संसद के किसी भी सदन में पेश किया जा सकता है।	• यह राज्य विधानमंडल के किसी सदन में पेश किया जा सकता है।
• यह किसी मंत्री या निजी सदस्य द्वारा पेश किया जा सकता है।	• यह किसी मंत्री या निजी सदस्य द्वारा पेश किया जा सकता है।
• मूल सदन में पहले, दूसरे और तीसरे वाचन के बाद यह पारित होता है।	• मूल सदन में पहले, दूसरे और तीसरे वाचन के बाद यह पारित होता है।

- यह तभी पारित माना जाता है जब इसमें संसद के दोनों सदनों की संशोधन या बिना संशोधन के सहमति हो।
- दोनों सदनों के बीच अंतिम बाधा तब होता है जब पहले सदन द्वारा पारित विधेयक को प्राप्त कर लिया जाए और पहले सदन द्वारा संशोधन को स्वीकार न कर छह महीने तक विधेयक को पारित न किया जाए।
- किसी विधेयक के मसौदे पर दोनों सदनों में असहमति होने पर, इसे पारित करने के लिए संविधान में संसद के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक का प्रावधान है।
- लोकसभा दूसरी बार विधेयक के पारित होने पर राज्यसभा के आगे नहीं जा सकती। दोनों सदनों के बीच एकमात्र रास्ता संयुक्त अधिवेशन है।

- यह तभी पारित माना जाता है जब इसमें राज्य विधानमंडल के दोनों सदनों की संशोधन या बिना संशोधन के सहमति हो।
- दोनों सदनों के बीच अंतिम बाधा तब होता है जब पहले सदन द्वारा संशोधन को स्वीकार न कर तीन महीने तक विधेयक को पारित न किया जाए।
- किसी विधेयक के मसौदे पर विधानमंडल के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक का संविधान में प्रावधान नहीं है।
- जब एक विधेयक विधानसभा द्वारा दूसरी बार पारित कर परिषद को भेजा जाता है तब यदि परिषद एक माह तक इसे पारित न करे तो यह उसी रूप में पारित माना जाएगा। जिस रूप में विधानसभा ने इसे पारित किया था।

धन विधेयक के संबंध में

संसद

- यह केवल लोकसभा में पेश किया जा सकता है, न कि राज्यसभा में।
- इसे केवल राष्ट्रपति की संस्तुति के बाद ही पेश किया जा सकता है।
- यह केवल एक मंत्री द्वारा ही पेश किया जा सकता है न कि निजी सदस्य द्वारा।
- इसे राज्यसभा द्वारा संशोधित या अस्वीकृत नहीं किया जा सकता। इसे लोकसभा को सिफारिश या बिना सिफारिश के 14 दिन के अंदर लौटाना चाहिए।
- लोकसभा, राज्यसभा द्वारा सुझाए गए सिफारिश को स्वीकार या अस्वीकार कर सकती है।
- यदि लोकसभा किसी सिफारिश को स्वीकार कर लेती है तो इसे दोनों सदनों द्वारा परिवर्तित रूप में पारित मान लिया जाता है।
- यदि लोकसभा किसी सुझाव को न माने तो विधेयक को दोनों सदनों द्वारा इसके मूल रूप में पारित समझा जाएगा।

राज्य विधानमंडल

- यह केवल विधानसभा में पेश किया जा सकता है, न कि विधानपरिषद में।
- इसे केवल राज्यपाल की संस्तुति के बाद ही पेश किया जा सकता है।
- यह केवल एक मंत्री द्वारा ही पेश किया जा सकता न कि निजी सदस्य द्वारा।
- इसे विधानपरिषद द्वारा संशोधित या अस्वीकृत नहीं किया जा सकता। इसे विधानसभा को सिफारिश या बिना सिफारिश के 14 दिन के अंदर लौटा देना चाहिए।
- विधानसभा, विधानपरिषद की सिफारिश को स्वीकार या अस्वीकार कर सकती है।
- यदि विधानसभा किसी सिफारिश के साथ इसे स्वीकार कर लेती है तो इसे दोनों सदनों द्वारा परिवर्तित रूप से पारित मान लिया जाता है।
- यदि विधानसभा किसी सुझाव को न माने तो विधेयक को दोनों सदनों द्वारा इसके मूल रूप से पारित माना जाएगा।

- यदि राज्यसभा विधेयक को 14 दिनों के भीतर न लौटाए तो तय सीमा के भीतर इसे पारित माना जाएगा।
- संविधान दोनों सदनों के बीच विधेयक पारित करने के लिए अंतिम विकल्प उपलब्ध नहीं कराता। ऐसा इसलिए क्योंकि लोकसभा राज्यसभा पर व्याप्त रहती है और वह यदि सहमत न हो तो पूर्व विधेयक

पास हो जाता है।
पाास हो जाता है।

राज्य विधानमंडल के विशेषाधिकार

राज्य विधानमंडल के कुछ विशेष अधिकार होते हैं। विध ानमंडल के सदनों, उसकी कमेटियों और सदस्यों को अपने कार्यों को प्रभावी रूप देने के लिए सुरक्षा एवं स्वतंत्रता की जरूरत होती है। बिना इन सुविधाओं के सदन न तो वह व्यवस्था बना सकते हैं और न ही अपनी जिम्मेदारियां निभा सकते हैं।

सामूहिक विशेषधिकार :

प्रत्येक सदन को मिलने वाली सामूहिक विधानमंडलीय सुविधाएं इस प्रकार हैं-

- सदन की कार्यवाही की जांच अदालत नहीं करती।
- इन्हें अपनी रिपोर्ट प्रकाशित करने और कार्यवाही में बहस करने का अधिकार है।[17]

वे साक्ष्य देने या किसी केस में बतौर गवाह उपस्थित होने से इनकार कर सकते हैं।

- यदि विधानसभा विधेयक को 14 दिनों के भीतर न लौटाए तो तय सीमा के भीतर इसे पारित माना जाएगा।
- संविधान दोनों सदनों के बीच पारित करने के लिए अंतिम विकल्प उपलब्ध नहीं कराता। ऐसा इसलिए क्योंकि विधान सभा विधानपरिषद पर व्याप्त रहती है और वह यदि सहमत न हो तो पूर्व विधेयक

- अपने सदस्य के पकड़ें जाने, जेल में डालने या छूटने की त्वरित जानकारी लेने का अधिकार।
- इन्हें यह भी अधिकार है कि महत्वपूर्ण मामलों में गुप्त मंत्रणा करें।

व्यक्तिगत विशेषाधिकार

- उन्हें सदन चलने के 40 दिन पहले और 40 दिन बाद तक गिरफ्तार नहीं किया जा सकता। यह केवल फौजदारी मामले में है।
- राज्य विधानमंडल में उन्हें बोलने की स्वतंत्रता है। उसके द्वारा दिए गए मत या विचार को किसी अदालत में चुनौती नहीं दी जा सकती।
- वे न्यायिक मामलो से मुक्त होते हैं। जब सदन चल रहा हो

राज्य विधानमंडल की सदस्य संख्या

क्र.सं.	राज्य	विधानसभा में सदस्य	विधानपरिषद में सदस्य संख्या
1.	आंध्रप्रदेश	294	-
2.	अरूणाचल प्रदेश	60	-
3.	असम	126	-
4.	बिहार	243	75
5.	छत्तीसगढ़	90	-
6.	गोवा	40	-
7.	गुजरात	182	-
8.	हरियाणा	90	-
9.	हिमाचल प्रदेश	68	-
10.	जम्मू और कश्मीर	76	36
11.	झारखंड	81	-

12.	कर्नाटक	224	63
13.	केरल	140	–
14.	मध्य प्रदेश	230	–
15.	महाराष्ट्र	288	78
16.	मणिपुर	60	–
17.	मेघालय	60	–
18.	मिजोरम	40	–
19.	नागालैंड	60	–
20.	उड़ीसा	147	–
21.	पंजाब	117	–
22.	राजस्थान	200	–
23.	सिक्किम	32	–
24.	तमिलनाडु	234	–
25.	त्रिपुरा	60	–
26.	उत्तरप्रदेश	403	100
27.	उत्तरांचल	70	–
28.	पश्चिम बंगाल	294	

EduBull.com

15. उच्चतम न्यायालय

भारतीय संविधान ने एकल न्याय व्यवस्था के तहत उच्चतम स्थान पर सर्वोच्च न्यायालय व उसके अधीन उच्च न्यायालयों की स्थापना की है। न्यायालय की यह एकल व्यवस्था भारत सरकार अधिनियम 1935 से ली गई और इसे केंद्रीय एवं राज्य कानून में समान रूप से लागू किया गया। भारत के उच्चतम न्यायालय का गठन 28 जनवरी, 1950 को किया गया। यह भारत सरकार अधि नियम 1935 के तहत लागू संघ न्यायालय का उत्तराधिकारी था। अनुच्छेद 124 से 147 तक, भारतीय संविधान के भाग ट में उच्चतम न्यायालय का गठन, स्वतंत्रता, न्यायक्षेत्र, शक्तियां, व्यवस्था आदि का उल्लेख है।

उच्चतम न्यायालय का गठन

इस समय उच्चतम न्यायालय में 26 न्यायाधीश (एक मुख्य न्यायाधीश) है। मूलत: उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की संख्या 8 (एक मुख्य न्यायाधीश और 7 उच्च न्यायाधीश) निश्चित थी।

न्यायाधीश

न्यायाधीशों की नियुक्ति: उच्चतम न्यायालय के न्यायाध ीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति अन्य न्ययाधीशों एवं उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की सलाह के बाद करता है। इसी तरह अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति भी होती है। इसमें मुख्य न्यायाधीश की सलाह आवश्यक है।

न्यायाधीशों की योग्यता: उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश बनने के लिए किसी व्यक्ति में निम्नलिखित योग्यताएं होनी चाहिए।

- उसे भारत का नागरिक होना चाहिए।
- (अ) उसे किसी उच्च न्यायालय का कम से कम पांच साल के लिए न्यायाधीश होना चाहिए, या (ब) उसे उच्च न्यायालय या विभिन्न न्यायालयों में मिलाकर 10 साल तक वकील होना चाहिए, या (स) राष्ट्रपति के मत में उसे पारंगत विधिवेत्ता होना चाहिए।

शपथ या वचन: उच्चतम न्यायालय के लिए नियुक्त न्यायाधीश को अपना कार्यकाल संभालने से पूर्व राष्ट्रपति या इस कार्य के लिए उसके द्वारा नियुक्त व्यक्ति के सामने निम्नलिखित शपथ लेनी होगी–

- भारत के संवधिान के प्रति विश्वास एवं सत्यनिष्ठा।
- भारत की एकता एवं अखंडता को अक्षुण्ण रखना।
- अपनी सर्वोच्च योग्यता एवं ज्ञान के साथ विश्वासपूर्वक, बिना डर एवं पक्षपात के सत्यता के अनुरूप फैसला देना।

न्यायाधीशों का कार्यकाल

- वह 65 वर्ष की आयु तक पद पर बना रह सकता है।
- उम्र के मामले में किसी प्रश्न के उठने पर संसद द्वारा स्थापित संस्था इसका निर्धारण करेगी।
- संसद की सिफाशि पर राष्ट्रपति द्वारा उसे पद से हटाया जा सकता है।
- राष्ट्रपति को वह लिखित त्यागपत्र दे सकता है।

यह रोचक है कि उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश पर अब तक महाभियोग नहीं लगाया जा सका है।

वेतन एवं भत्ते

वेतन, भत्ते, सुविधाएं, अवकाश एवं पेंशन का निर्धारण समय-समय पर संसद द्वारा किया जाता है। लेकिन न्यायाधीश की पदावधि के दौरान कोई अलाभकारी परिवर्तन नही किया जाएगा।

कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश

राष्ट्रपति किसी न्यायाधीश को उच्चतम न्यायालय का कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश नियुक्त कर सकता है जब–

- मुख्य न्यायाधीश का पद रिक्त हो,
- अस्थायी रूप से मुख्य न्यायाधीश अनुपस्थित हो,
- मुख्य न्यायाधीश अपने दायित्वों के निर्वहन में असमर्थ हो।

तदर्थ न्यायाधीश

जब कभी कोरम पूरा करने में स्थायी न्यायाधीशों की संख्या कम हो रही हो तो भारत का मुख्य न्यायाधीश किसी उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश को अस्थायी काल के लिए उच्चतम न्यायालय में न्यायाधीश नियुक्त कर सकता है। ऐसा वह राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बाद ही कर सकता है।

सेवानिवृत्त न्यायाधीश

किसी भी समय भारत का मुख्य न्यायाधीश उच्चतम न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश या उच्च न्यायालय से अल्पकाल के लिए उच्चतम न्यायालय में कार्य करने का अनुरोध कर सकता है। ऐसा संबंधित व्यक्ति एवं राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति से ही किया जा सकता है।

उच्चतम न्यायालय का स्थान

संविधान ने उच्चतम न्यायालय का स्थान दिल्ली में घोषित

किया। लेकिन मुख्य न्यायाधीश को यह अधिकार है कि उच्चतम न्यायालय का स्थान कहीं और नियुक्त करे लेकिन ऐसा निर्णय वह राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति के बाद ही ले सकता है।

उच्चतम न्यायालय की शक्तियां एवं क्षेत्राधिकार

संविधान में उच्चतम न्यायालय की व्यापक शक्तियों एवं क्षेत्राधिकार को उल्लिखित किया गया है। उच्चतम न्यायालय की शक्ति एवं न्यायक्षेत्रों को निम्नलिखित तरह से वर्गीकृत किया जा सकता है–

प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार

किसी भी विवाद को जो

- केंद्र व एक या अधिक राज्यों के बीच हों, या
- केंद्र और कोई राज्य या राज्यों का एक तरफ होना एवं एक या अधिक राज्यों का दूसरी तरफ होना, या
- दो या अधिक राज्यों के बीच।

उपरोक्त संघीय विवाद पर उच्चतम न्यायालय में 'विशेष मूल' न्यायक्षेत्र निहित है। विशेष का मतलब है किसी अन्य न्यायालय को विवादों के निपटाने में इस तरह की शक्तियां प्राप्त नहीं हैं।

न्यायादेश क्षेत्राधिकार

संविधान ने उच्चतम न्यायालयों को नागरिकों के मूल अधिकारों का रक्षक के रूप में स्थापित किया है। उच्चतम न्यायालय को अधिकार प्राप्त है कि वह बंदी प्रत्यक्षीकरण, उत्प्रेषण परमादेश आदि न्यायादेश जारी कर नागरिक के मूल अधिकारों की रक्षा करें। न्यायिक क्षेत्र के मामले में उच्चतम केवल मूल अधिकारों के क्रियान्वयन के संबंध में न्यायादेश जारी कर सकता है, अन्य उद्देश्य से नहीं; जबकि दूसरी तरफ उच्च न्यायालय न केवल मूल अधिकारों के लिए न्यायादेश जारी कर सकता है बल्कि अन्य उद्देश्यों के लिए भी इसे जारी कर सकता है।

पुनर्विचार क्षेत्राधिकार

पुनर्विचार न्यायक्षेत्र को निम्नलिखित चार शीर्षों में वर्गीकृत किया जा सकता है–

- संवैधानिक मामले: संवैधानिक मामलों में उच्चतम न्यायालय में उच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ अपील की जा सकती है। यदि उच्च न्यायालय इसे प्रमाणित करे कि मामले में कानून का पूरक प्रश्न निहित है।
- दीवानी मामले: दीवानी मामलों के तहत उच्चतम न्यायालय में किसी भी मामले को लाया जा सकता है यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित कर दे कि–
  - मामला सामान्य महत्व के पूरक प्रश्न पर आधारित है।
  - ऐसा प्रश्न है जिसका निर्णय उच्चतम न्यायालय द्वारा किया जाना चाहिए।
- **आपराधिक मामले:** उच्चतम न्यायालय उच्च न्यायालय के आपराधिक मामलों के फैसलों के खिलाफ सुनवाई उस समय करता है जब –
  - अभियुक्त को सजा-ए-मौत मिली हो और उसने इसके विरुद्ध अपील की हो।
  - यह प्रमाणिक हो जाए कि संबंधित मामला उच्चतम न्यायालय में ले जाने योग्य है।
  - यदि उच्च न्यायालय में कोई अपील हो जिसके तहत आरोपी व्यक्ति को उम्र कैद या दस साल की सजा सुनाई गई हो।
  - उच्च न्यायालय खुद किसी मामले को किसी अधीनस्थ न्यायालय से लिया हो और आरोपी व्यक्ति को उम्र कैद या दस साल की सजा सुनाई गई हो।

सलाहकार क्षेत्राधिकार

संविधान (अनुच्छेद 143) राष्ट्रपति को दो श्रेणियों के मामलों में उच्चतम न्यायालय से राय मांगने का अधकिार देता है–

- सार्वजनिक महत्व के किसी मसले पर कानूनी प्रश्न उठने पर।
- किसी पूर्व संवैधानिक संधि, समझौते आदि समान मामलों पर किसी विवाद के उत्पन्न होने पर।

पहले मामले में उच्चतम न्यायालय अपना मत दे भी सकता है और देने से इनकार भी कर सकता है। दूसरे मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा राष्ट्रपति को अपना मत देना अनिवार्य है।

अभिलेख की अदालत

अभिलेखों की अदालत के रूप में उच्चतम न्यायालय के पास दो शक्तियां हैं-

- उच्चतम न्यायालय की कार्यवाही एवं उसके फैसले सार्वकालिक अभिलेख व साक्ष्य के रूप में रखे जाएंगे।
- इसके पास न्यायालय की अवहेलना पर दंडित करने का अधिकार है।

दालत की अवमानना सामान्य नागरिक प्रशासन संबंधी या आपराधिक दोनों प्रकार की हो सकती है।

न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति

उच्चतम न्यायालय में न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति निहित है। इसके तहत वह केंद्र व राज्य दोनों स्तरों पर विधायी 'व कार्यकारी गतिविधियों का परीक्षण करता है। यदि इसमें उसे कोई हनन दिखता है तो इसे वह अवैध घोषित कर सकता है। न्यायिक पुनर्विलोकन की आवश्यकता निम्नलिखित के लिए है-

- संविधान की सर्वोच्चता के सिद्धांत को बनाए रखने के लिए।
- संघीय समानता को बनाए रखने (केंद्र एवं राज्यों के बीच संतुलन) के लिए।
- नागरिकों के मूल अधिकारों की रक्षा के लिए।

अन्य शक्तियां

उपरोक्त शक्तियों के अतिरिक्त उच्चतम न्यायालय को कई अन्य शक्तियां भी प्राप्त हैं-

- यह राष्ट्रपति एवं उपराष्ट्रपति के निर्वाचन के संबंध में किसी प्रकार के विवाद का निपटारा करता है।
- यह संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष एवं सदस्यों के व्यवहार एवं आचरण की जांच करता है, उस संदर्भ में जिसे राष्ट्रपति द्वारा निदेर्शित किया गया है। यदि उसे दुव्यर्वहार का दोषी पाता है तो राष्ट्रपति से उसको हटाने की सिफारिश कर सकता है।
- अपने स्वयं के फैसले की समीक्षा करने की शक्ति इसे है,
- इसके कानून भारत के सभी न्यायालयों के लिए बाध्य होंगें।
- यह संविधान का अन्तिम व्याख्याता है।

EduBull.com

16. उच्च न्यायालय और अधिनस्थ न्यायालय

भारत की एकल न्यायिक व्यवस्था में उच्च न्यायालय उच्चतम न्यायालय के अधीन लेकिन अन्य अधीनस्थ न्यायालयों के ऊपर होता है। भारत में सर्वप्रथम उच्च न्यायालय का गठन 1862 में तब हुआ जब कलकत्ता, बंबई और मद्रास उच्च न्यायालयों की स्थापना हुई। इस समय भारत में 21 उच्च न्यायालय है। केंद्रशासित राज्यों में केवल दिल्ली ऐसा राज्य है जिसका अपना उच्च न्यायालय (1966 से) है। संसद किसी उच्च न्यायालय के क्षेत्र का विस्तार किसी केंद्रशासित राज्य या अन्य क्षेत्र में भी कर सकती है। प्रत्येक उच्च न्यायालय में एक मुख्य न्यायाधीश और कुछ अन्य न्यायाधीश जिन्हें जरूरत के अनुसार समय-समय पर राष्ट्रपति नियुक्त करते हैं, होते हैं।

न्यायाधीशों की नियुक्तिः उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। मुख्य न्यायधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति भारत के मुख्य न्यायधीश और संबंधित राज्य के राज्यपाल से परामर्श के बाद करता है। अन्य न्यायधीशों की नियुक्ति में संबंधित उच्च न्यायालय के न्यायधीश से भी परामर्श लिया जाता है।

न्यायाधीशों की योग्यताएं

उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए व्यक्ति के पास निम्न योग्यताएं होनी चाहिएं-

- वह उच्च न्यायालय (या न्यायालयों) में लगातार 10 वर्ष तक अधिवक्ता रह चुका हो।
- उसे भारत के न्यायायिक कार्य में दस वर्ष का अनुभव हो।
- उसे भारत का नागरिक होना चाहिए।

शपथ

जिस व्यक्ति को उच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त किया गया है, पद संभालने के पूर्व उसे उस राज्य के राज्यपाल या इस कार्य के लिए राज्यपाल द्वारा नियुक्त व्यक्ति के सामने शपथ/वचन लेनी होती है। अपनी शपथ में उच्च न्यायालय का जज वचन देता है-

- भारत की एकता एवं अखंडता को अक्षुण्ण रखूंगा।
- संविधान और कानून का पालन करूंगा।
- बिना किसी डर, भय, राग-द्वेष के निष्पक्ष होकर अपने सर्वोत्तम विवेक का इस्तेमाल कर न्याय करूंगा।
- भारत के संविधान के प्रति सत्य और निष्ठा रखूंगा।

न्यायाधीशों का कार्यकाल

- उसे दो स्थितियों में पद छोड़ना पड़ सकता है-पहला, उसकी नियुक्ति उच्चतम न्यायालय में हो गई हो या फिर उसका किसी दूसरे उच्च न्यायालय में स्थानांतरण कर दिया गया हो।
- 62 वर्ष की आयु तक कार्यभार संभाल सकता है। यदि उसकी उम्र को लेकर सवाल उठते हैं तो राष्ट्रपति भारत के मुख्य न्यायाधीशों से परामर्श कर निर्णय लेता है। इस संबंध में राष्ट्रपति का निर्णय अंतिम होता है।
- न्यायाधीश राष्ट्रपति को त्यागपत्र भेज सकता है।
- संसद की संस्तुति के बाद राष्ट्रपति उसे पद से हटा सकता है।

संसद में प्रस्ताव लाने के बाद राष्ट्रपति उसे हटाने का आदेश जारी कर सकता है। प्रस्ताव को विशेष बहुमत के साथ प्रत्येक सदन का समर्थन (इस प्रस्ताव को प्रत्येक सदन में कुल सदस्यों के दो तिहाई सदस्यों का समर्थन या सदन में मौजूद सदस्यों के दो तिहाई का समर्थन) मिलना आवश्यक है। हटाने के दो आधार साबित होने चाहिएं, पहला दुर्व्यवहार और दूसरा अक्षमता।

वेतन एवं भत्ते

उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का वेतन, भत्ते, सुविधाएं, अवकाश और पेंशन को समय-समय पर संसद द्वारा निर्धारित किया जाता है। उनकी नियुक्ति के बाद उनमें कोई कमी नहीं की जा सकती।

न्यायाधीशों का स्थानांतरण

भारत के मुख्य न्यायाधीश से विचार के बाद राष्ट्रपति एक न्यायाधीश की नियुक्ति एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय में कर सकता है। स्थानांतरण पर उसे अतिरिक्त वेतन, भत्ते जिन्हें संसद द्वारा तय किया जाता है, मिलता है।

कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश

राष्ट्रपति किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को उस उच्च न्यायालय का कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश नियुक्त कर सकता है।

- यदि उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश का पद रिक्त हो, या
- यदि उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश अस्थायी रूप से अनुपस्थित हो, या

- यदि मुख्य न्यायाधीश अपने कार्य निर्वहन में असमर्थ हो।

अतिरिक्त और कार्यकारी न्यायाधीश

राष्ट्रपति योग्य व्यक्तियों को उच्च न्यायालय के अतिरिक्त न्यायाधीश के रूप में नियुक्त कर सकते हैं। यह नियुक्ति अस्थायी रूप से और दो वर्ष से अधिक की नहीं होती।

सेवानिवृत्त न्यायाधीश

उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश किसी भी समय रहे एक राज्य के सेवानिवृत्त न्यायाधीश को अल्पकाल के लिए बतौर कार्यकारी न्यायाधीश काम करने के लिए कह सकते हैं। ऐसा राष्ट्रपति की पूर्व संस्तुति एवं संबंधित व्यक्ति की मंजूरी के बाद ही संभव है।

उच्च न्यायालय का न्याय क्षेत्र एवं शक्तियां

उच्चतम न्यायालय की तरह ही उच्च न्यायालय की भी विस्तारित एवं प्रभावी शक्तियां होती हैं। यह राज्य में अपील करने का सर्वोच्च न्यायालय होता है। यह नागरिकों के मूल अधिकारों का रक्षक होता है। इसके पास संविधान की व्याख्या करने का अधिकार होता है। इसके अलग इसकी भूमिका पर्यवेक्षक एवं सलाहकारी की तरह होती है।

वर्तमान में उच्च न्यायालयों को निम्नलिखित न्यायिक शक्तियां प्राप्त हैं-

- न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति।
- अपीलीय क्षेत्राधिकार,
- पर्यवेक्षीय क्षेत्राधिकार,
- अधीनस्थ न्यायालयों पर नियंत्रण,
- अभिलेखों का न्यायालय,
- प्रारंभिक क्षेत्राधिकार,
- न्यायादेश, मैरिट क्षेत्राधिकार,

प्रारंभिक क्षेत्राधिकार

इसका अर्थ है कि उच्च न्यायालय की शक्ति है कि प्रथम मामले में विवादों की सुनवाई हो, सीधे अपील करके नहीं यह निम्नलिखित मामलों में विस्तारित है-

- राजस्व मामले या राजस्व एकत्र में निर्देश।
- संसद सदस्यों और राज्य विधानमंडल सदस्यों के निर्वाचन में कोई विवाद।
- अधिकारिता का मामला, वसीयत, विवाह, तलाक, कंपनी कानून एवं न्यायालय की अवहेलना।

रिट क्षेत्राधिकार

संविधान का अनुच्छेद 226 उच्च न्यायालय को न्यायादेश (रिट) की शक्ति प्रदान करता है। उच्च न्यायालय का रिट क्षेत्राधिकार (अनुच्छेद 226 के तहत) उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार (अनुच्छेद 32 के तहत) के समान है। इसका तात्पर्य है कि जब किसी नागरिक के मूल अधिकार का हनन होता है तो पीड़ित व्यक्ति का अधिकार है कि वह या तो उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय सीधे जा सकता है।

अपीलीय क्षेत्राधिकार

उच्च न्यायालय प्राथमिक अपीलीय न्यायालय है। अपने राज्य क्षेत्र के तहत आने वाले अधीनस्थ न्यायालयों के आदेशों के विरुद्ध यहां सुनवाई होती है। यहां दोनों तरह के सामान्य नागरिक अधिकार एवं आपराधिक मामलों के बारे में अपील होता है।

दीवानी मामले

इस संबंध में उच्च न्यायालय का न्यायादेश निम्नवत है-

- प्रशासनिक निर्णयों से एवं अन्य tribunals से अपील को उच्च न्यायालय की खंडीय बेंच के सामने रखा जा सकता है।
- जिला न्यायालयों एवं अन्य अधीनस्थ न्यायालयों के निर्णय के खिलाफ दूसरी अपील जिसमें कानून का प्रश्न हो (तथ्यों का नहीं)।
- सर्वप्रथम अपील जिला न्यायालयों, अतिरिक्त जिला न्यायालयों एवं अन्य अधीनस्थ न्यायालयों के आदेशों को सीधे उच्च न्यायालय में लाया जा सकता है।

आपराधिक मामले

उच्च न्यायालय का आपराधिक मामलों में न्यायायिक अपीलीय क्षेत्र निम्नलिखित है-

- कुछ मामलों में आपराधिक कार्यवाही कोड (1973) के लिए विशेष प्रावधान है। सहायक सत्र न्यायाधीश, नगर दंडाधिकारी या अन्य दंडाधिकारी (न्यायिक) की अपील उच्च न्यायालय मे की जा सकती है।
- सत्र न्यायालय और अतिरिक्त सत्र न्यायालय के निर्णय के खिलाफ उच्च न्यायालय में तब अपील की जा सकती है जब किसी को सात साल से अधिक सजा हुई हो।

पर्यवेक्षीय क्षेत्राधिकार

उच्च न्यायालय को इस बात का अधिकार है कि वह अपने न्यायिक क्षेत्र के सभी न्यायालयों व सहायक न्यायालयों के क्रियाकलापों की देखरेख करे (सैन्य न्यायालयों को छोड़कर)।

इस तरह वह–

- उनके द्वारा रखे जाने वाले लेखा, सूची आदि के लिए कार्य की उपलब्धता कराता है।
- उन्हें वहां से बुला सकता है।
- उनकी कार्यवाही के संबंध के मुद्दे, सामान्य नियम, नियंत्रण आदि बनाता है।

अधीनस्थ न्यायालयों पर नियंत्रण

अपीलीय न्यायिक क्षेत्र एवं पर्यवेक्षणीय अधीनस्थ न्यायालयों जिनका ऊपर जिक्र किया गया है, के ऊपर एक उच्च न्यायालय का प्रशासनिक नियंत्रण और अन्य शक्तियां रहती है। इनमें निम्नलिखित शामिल हैं–

- यह अधीनस्थ न्यायालय में लंबित किसी मामले को वापस ले सकता है।
- यह राज्य की न्यायिक सेवा (जिला न्यायाधीशों के अलावा), सदस्यों के अनुशासन, स्थानांतरण, अवकाश स्वीकृति, पदोन्नति आदि मामलों को भी देखता है।
- इसके कानून को उन सभी अधीनस्थ न्यायालयों को मानने की बाध्यता होती है, जो उसके न्यायिक क्षेत्र में आते हैं।
- जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति, पदोन्नति, स्थानांतरण एवं व्यक्ति विशेष की राज्य न्यायिक सेवा (जिला न्यायाधीशों के अलावा), में राज्यपाल से परामर्श लिया जाता है।

अभिलेख का न्यायालय

अभिलेख के न्यायालय के रूप में उच्च न्यायालय के पास दो शक्तियां हैं–

- इसे न्यायालय की अवहेलना पर दंड देने का अधिकार हैं। चाहे वह साधारण कारावास हो या आर्थिक दंड या दोनों।
- फैसले, कार्यवाही और उच्च न्यायालय के कार्य अभिलेखीय याददाश्त एवं प्रमाण के लिए रखे जाते हैं।

न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति

उच्च न्यायालय की न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति यह देखने में निहित है कि राज्य विधानमंडल व केंद्र सरकार के कम्री संवैधानिक रूप से कार्य कर रहे हैं। यद्यपि न्यायिक पुनर्विलोकन की संविधान में व्याख्या नहीं की गयी है। अनुच्छेद 13 और 226 में उच्च न्यायालय द्वारा समीक्षा के प्रावधान को दर्शाया गया है। संवैधानिक वैधता के मामले में विधानमंडलीय कार्य को चुनौती दी जा सकती है।

अधीनस्थ न्यायालय

संविधान के छठे भाग में अनुच्छेद 233 से 237 अधीनस्थ न्यायालयों को कार्यकारिणी से स्वतत्र रखने के लिए निम्नलिखित व्यवस्था की गई–

जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति

राज्य में जिला जजों की नियुक्ति, स्थानांतरण और पदोन्नति पर राज्यपाल द्वारा उच्च न्यायालय से परामर्श किया जाता है। जिस व्यक्ति को जिला न्यायाधीश नियुक्त किया जा रहा है उसकी निम्नलिखित योग्यता होनी चाहिए।

- उसे केंद्र या राज्य सरकार की सेवा में नहीं होना चाहिए।
- उसे वकील होना चाहिए या सात वर्ष का समान अनुभव।
- उसका अनुमोदन उच्च न्यायालय द्वारा होना चाहिए।

अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति

राज्य न्यायिक सेवा में किसी व्यक्ति की नियुक्ति (जिला न्यायाधीशों के अलावा) हेतु राज्यपाल उच्च न्यायालय और राज्य लोक सेवा आयोग का परामर्श लेता है।

अधीनस्थ अदालतों पर नियंत्रण

जिला अदालतों एवं अधीनस्थ अदालतो पर नियंत्रण जिनमें स्थानांतरण, पदोन्नति और राज्य न्यायिक सेवा से जुड़े व्यक्ति के अवकाश आदि मामले उच्च न्यायालय के अधीन रहते हैं। यह नियंत्रण अधीनस्थ न्यायिक व्यवस्था की स्वतंत्रता को सुरक्षित करती है।

उच्च न्यायालय के न्यायिक क्षेत्र एवं नाम

	uke	LFkkiuk dk o"kZ	U;kf;d {ks=k	[k.MihB
1.	इलाहाबाद	1866	उत्तर प्रदेश	हलाहाबाद (लखनऊ में बेंच)
2.	आंध्र प्रदेश	1954	आंध्र प्रदेश	हैदराबाद
3.	बंबई	1862	महाराष्ट्र, गोवा, दादर और नगर हवेली	मुंबई (नागपुर, पणजी और औरंगाबाद में खंडपीठ)
4.	कलकत्ता	1862	पश्चिम बंगाल एवं अंडमान	कोलकाता (पोर्ट ब्लेयर में भ्रमणकारी

			और निकोबार द्वीप समूह	खंडपीठ)
5.	छत्तीसगढ़	2000	छत्तीसगढ़	बिलासपुर
6.	दिल्ली	1966	दिल्ली	दिल्ली
7.	गुवाहाटी	1948	असम, मणिपुर, मेघालय, नागालैंड, त्रिपुरा, मिजोरम और अरुणाचल प्रदेश	गुवाहाटी (कोहिमा, आईजॉल, इम्फाल, शिलांग और अगरतला में खंडपीठ)
8.	गुजरात	1960	गुजरात	अहमदाबाद
9.	हिमाचल प्रदेश	1971	हिमाचल प्रदेश	शिमला
10.	जम्मू एवं कश्मीर	1928	जम्मू एवं कश्मीर	श्रीनगर और जम्मू
11.	झारखंड	2000	झारखंड	रांची
12.	कर्नाटक	1884	कर्नाटक	बंगलौर
13.	केरल	1958	केरल और लक्षद्वीप	अर्नाकुलम
14.	मध्यप्रदेश	1956	मध्यप्रदेश	जबलपुर (इंदौर और ग्वालियर में खंडपीठ
15.	मद्रास	1862	तमिलनाडु और पांडिचेरी	चेन्नई
16.	उड़ीसा	1948	उड़ीसा	कटक
17.	पटना	1916	बिहार	पटना
18.	पंजाब और हरियाणा	1875	पंजाब, हरियाणा और चंडीगढ़	चंडीगढ़
19.	राजस्थान	1949	राजस्थान	जोधपुर (जयपुर में खंडपीठ)
20.	सिक्किम	1975	सिक्किम	गंगटोक
21.	उत्तराखण्ड	2000	उत्तराखण्ड	नैतीताल

EduBull.com

17. भारत के महान्यायवादी एवं महाधिवक्ता

संविधान में (अनुच्छेद 76) भारत के महान्यावादी' के पद की व्यवस्था की गई है। वह देश का सर्वोच्च कानून अधिकारी होता है।

नियुक्ति एवं कार्यकाल

महान्यायवादी (अटार्नी जनरल) की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा होती है। उसमें उन योग्यताओं का होना आवश्यक है जो उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति के लिए होती है। दूसरे शब्दों में, उसके लिए आवश्क है कि वह भारत का नागरिक हो, उसे उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में काम करने का पांच वर्षों का अनुभव हो या किसी उच्च न्यायालय में वकालत का 10 वर्षों का अनुभव हो या राष्ट्रपति के मतानुसार वह न्यायायिक मामलों का योग्य व्यक्ति हो। वह अपने पद पर राष्ट्रपति की दया तक बने रह सकता है। इसका तात्पर्य है कि उसे राष्ट्रपति द्वारा किसी भी समय हटाया जा सकता है। वह राष्ट्रपति को कभी भी अपना त्यागपत्र सौंपकर पदमुक्त हो सकता है। संविधान में महान्यायवादी का पारिश्रमिक तय नहीं किया गया है, उसे राष्ट्रपति द्वारा निर्धारित पारिश्रमिक मिलता है।

कर्त्तव्य एवं कार्य

भारत सरकार के मुख्य कानून अधिकारी के रूप में महान्यायवादी के निम्नलिखित कर्त्तव्य हैं-

- इस संबंध में संविधान या कानून द्वारा सौंपे गए कार्य को पूरा करना।
- राष्ट्रपति द्वारा भेजे गए कानूनी मसलों पर भारत सरकार को सलाह देना।
- राष्ट्रपति द्वारा सौंपे गए कानूनी मामलों से संबंधित वैधानिक कर्त्तव्य को पूरा करना।

राष्ट्रपति महान्यायवादी को निम्नलिखित कार्य सौंपता है–

- सरकार से संबंधित किसी मामले में उच्च न्यायालय में पेश होना।
- संबंधित मामलों को लेकर उच्चतम न्यायालय में भारत सरकार की ओर से पेश होना।

अधिकार एवं मर्यादाएं

भारत के किसी भी क्षेत्र में किसी भी अदालत में महान्यायवादी को पेश होने का अधिकार है। इसके अतिरिक्त संसद के दोनों सदनों में बोलने या कार्यवाही में भाग लेने या दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में मताधिकार के बगैर भाग लेने का अधिकार है।

राज्य के महाधिवक्ता

संविधान के अनुच्छेद 165 में व्यवस्था की गई है।

नियुक्ति एवं कार्यकाल

महाधिवक्ता की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा होती है। उस व्यक्ति में उच्च न्यायालय का न्यायाधीश बनने की योग्यता होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में उसे भारत का नागारिक होना चाहिए, उसे दस वर्ष तक न्यायिक अधिकारी या उच्च न्यायालय में 10 वर्षों तक वकालत करने का अनुभव होना चाहिए। संविधान द्वारा महाधिवक्ता के कार्यकाल को निश्चित नहीं किया गया है। वह अपने पद पर तब तक बना रहता है जब तक राज्यपाल की इच्छा हो, इसका तात्पर्य है कि उसे राज्यपाल द्वारा कभी भी हटाया जा सकता है। वह अपने पद से त्यागपत्र देकर भी कार्यमुक्त हो सकता है। संविधान में महाधिवक्ता के वेतन-भत्तों को भी निश्चित नहीं किया गया है। उसके वेतन-भत्तों का निर्धारण राज्यपाल द्वारा किया जाता है।

कर्त्तव्य एवं कार्य

राज्य में वह मुख्य कानून अधिकारी होता है। इस नाते महाधिवक्ता के कार्य निम्नवत हैं-

- संविधान या कानून सम्मत दिए गए संबंधित कानूनी कार्यों का निष्पादन।
- राज्यपाल द्वारा भेजे गए कानूनी मसलों पर सरकार को सलाह देना।
- राज्यपाल द्वारा दी गई जिम्मेदारी के तहत कानूनी मसलों पर कार्य निष्पादन।

अपने कार्य संबंधी कर्त्तव्यों के तहत उसे राज्य के किसी न्यायालय के समक्ष पेश होने का अधिकार है। इसके अतिरिक्त उसे विधानमंडल के दोनों सदनों या संबंधित कमेटी अथवा उस सभा में, जहां के लिए वह अधिकृत है, में बिना मताधिकार के बोलने व भाग लेने का अधिकार हैं। वह एक सरकारी कर्मी की श्रेणी में नहीं आता इसलिए उसे निजी कानूनी कार्यवाही से रोका नहीं जा सकता।

भारत का महाधिवक्ता

महान्यायवादी के अतिरिक्त भारत सरकार के अन्य कानूनी अधिकारी होते हैं। वे हैं भारत सरकार के महाधिवक्ता एवं अतिरिक्त महाधिवक्ता। वे महान्यायवादी को उसकी जिम्मेदारी पूरी करने में मदद करते हैं। यह उल्लेखनीय है कि महान्यायवादी का पद संविधान निर्मित है, दूसरे शब्दों में अनुच्छेद 76 में महाधिवक्ता एवं अतिरिक्त महाधिवक्ता का उल्लेख नहीं है। महान्यायवादी केंद्रीय कैबिनेट का सदस्य नहीं होता।

18. पंचायती राज

पंचायती राज का विकास

बलवंत राय मेहता समिति

जनवरी 1957 में भारत सरकार ने एक समिति का गठन किया। समिति ने नवंबर 1957 को अपनी जांच रिपोर्ट सौंपी और 'लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण (स्वायतत्ता)' की योजना की सिफारिश की जो कि अंतिम रूप से पंचायती राज के रूप में जाना गया। समिति द्वारा की गई विशिष्ट सिफारिशें निम्नलिखित हैं।

- इन निकायों को पर्याप्त वित्तीय स्रोत मिलने चाहिएं ताकि ये अपने कार्यों और जिम्मेदारियों को संपादित करने में समर्थ हो सके।
- ग्राम पंचायत की स्थापना प्रत्यक्ष रूप से चुने प्रतिनिधियों द्वारा होनी चाहिए, जबकि पंचायत समिति और जिला परिषद की स्थापना अप्रत्यक्ष रूप से चुने सदस्यों द्वारा होनी चाहिए।
- सभी योजना और विकास के कार्य इन निकायों को सौंपे जाने चाहिए।
- पंचायत समिति को कार्यकारी निकाय तथा जिला परिषद को सलाहकारी, समन्वयकारी और पर्यवेक्षकारी (निरीक्षक) निकाय होना चाहिए।
- तीन स्तरीय (भाग) पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना – गांव स्तर पर ग्राम पंचायत, ब्लॉक स्तर पर पंचायत समिति, जिला स्तर पर जिला परिषद।

समिति की इन सिफारिशों को राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा जनवरी 1958 में स्वीकार किया गया। **राजस्थान देश का पहला राज्य था, जहां पंचायती राज की स्थापना हुई।** इस व्यवस्था का शिलान्यास 2 अक्टूबर, 1959 को राजस्थान के नागौर जिले में प्रधानमंत्री द्वारा किया गया। इसके बाद आंध्रप्रदेश ने इस योजना को 1959 में लागू किया।

अशोक मेहता समिति

दिसंबर 1977 में, जनता पार्टी ने अशोक मेहता की अध्यक्षता में पंचायती राज संस्थाओं पर एक समिति का गठन किया। इसने अगस्त 1978 में अपनी रिपोर्ट सौंपी। इसकी मुख्य सिफारिशें इस प्रकार हैं–

- पंचायती राज संस्थाओं के मामलों की देखरेख के लिए राज्य मंत्रिपरिषद से एक मंत्री की नियुक्ति होनी चाहिए।
- जनसंख्या के आधार पर अनुसूचित जाति व जनजाति के लिए स्थान आरक्षित होना चाहिए।
- त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को द्विस्तरीय व्यवस्था में बदलना चाहिए।
- जिला परिषद कार्यकारी अंग होना चाहिए और वह राज्य स्तर पर योजना और विकास के लिए जिम्मेदार हो।
- राज्य के मुख्य चुनाव अधिकारी द्वारा मुख्य चुनाव आयुक्त की सलाह पर पंचायती राज चुनाव कराए जाने चाहिएं।
- विकास के कार्य जिला परिषद को स्थानांतरित होने चाहिएं और सभी विकास अधिकारी इसके नियंत्रण और देखरेख में होने चाहिए।
- सभी स्तर के पंचायती चुनावों में राजनीतिक पार्टियों की आधिकारिक भागीदारी हो।

जी.वी.के. राव और एल.एम. सिंहवी समिति

ग्रामीण विकास एवं गरीबी मुक्ति कार्यक्रम की प्रशासनिक व्यवस्था के लिए योजना आयोग द्वारा 1985 में जी.वी.के. राव की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया। समिति इस निष्कर्ष पर पहुंची कि विकास प्रक्रिया दफ्तरशाही युक्त होकर पंचायत राज से विच्छेदित हो गई है। समिति ने पंचायती राज पद्धति को मजबूत और पुनर्जीवित करने हेतु विभिन्न सिफारिशें कीं। 1986 में राजीव गांधी सरकार ने 'लोकतंत्र व विकास के लिए पंचायती राज संस्थाओं के पुनर्जीवन' पर एक समिति का गठन एल.एम. सिंहवी की अध्यक्षता में किया। इसने पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक रूप से मान्य, संरक्षित एवं परिरक्षित करने की सिफारिश की। इसने नियमित, स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव कराने के संवैधानिक प्रावधान की सलाह दी।

पी.वी. नरसिम्हा राव के प्रधानमंत्रित्व में कांग्रेस सरकार ने एक बार फिर पंचायती राज को संवैधानिक करने हेतु विचार किया। सितंबर 1991 को लोकसभा में एक संविधान संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया। अंतत: यह विधेयक 73वें संविधान संशोधन कानून 1992 के रूप में सम्मिलित हुआ और 25 अप्रैल, 1993 को प्रभाव में आया।

1992 का 73वां संशोधन अधिनियम

अधिनियम का महत्व

इस अधिनियम ने भारत के संविधान में एक नया भाग- IX सम्मिलित किया। इसे **'द पंचायत्स'** नाम से उल्लिखित किया गया और अनुच्छेद 243 से 243 0 तक प्रावधान सम्मिलित किए

गए। इस अधिनियम ने संविधान में एक नई 11वीं अनुसूची भी जोड़ी। इसमें पंचायतों के 29 कार्यकारी विषय है। इस अधिनियम ने संविधान के 40वें अनुच्छेद को एक प्रयोगात्मक आकार दिया। इस अधिनियम ने पंचायती राज संस्थाओं को एक संवैधानिक रूप दिया और इसे संविधान के अधिकार-क्षेत्र के अधीन लाया।

प्रमुख विशेषताएं

इस अधिनियम की महत्वपूर्ण विशेषताएं निम्नलिखित हैं-

ग्राम सभा: यह कानून पंचायती राज की स्थापना के साथ ग्राम सभा प्रदान करता है। पंजीकृत मतदाताओ से मिलकर ग्राम सभा बनती है।

त्रिस्तरीय व्यवस्था: इस कानून द्वारा सभी राज्यों के लिए त्रिस्तरीय व्यवस्था प्रदान की गई हैं, ग्राम, ब्लॉक और जिला स्तर पर पंचायत। एक राज्य जिसकी जनसंख्या 20 लाख से कम हो, माध्यमिक स्तर पर पंचायतों को कायम नहीं कर सकता है।

सीटों का आरक्षण: यह कानून प्रत्येक पंचायत में (सभी तीन स्तरों पर) अनुसूचित जाति एवं जनजाति को उनकी संख्या और कुल जनसंख्या के अनुपात में सीटों पर आरक्षण उपलब्ध कराता है।

इस अधिनियम में यह व्यवस्था की गई है कि आरक्षण के मसले पर महिलाओं के लिए उपलब्ध कुल सीटों की संख्या (इसमें वह संख्या भी शामिल है जिसके तहत अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं को आरक्षण दिया जाता है) एक तिहाई से कम न हो।

पंचायतों का कार्यकाल: यह कानून सभी स्तरों पर पंचायतों का कार्यकाल पांच वर्ष के लिए निश्चित करता है। फिर भी, समय पूरा होने से पूर्व भी उसे विलीन कर सकता है।

अयोग्यताएं: कोई भी व्यक्ति पंचायत का सदस्य नहीं बन पाएगा यदि वह निम्न प्रकार से अयोग्य होगा। राज्य विधानमंडल द्वारा बने किसी भी नियम के अंतर्गत। लेकिन किसी भी व्यक्ति को इस बात पर अयोग्य घोषित नहीं किया जाएगा कि वह 25 वर्ष से कम आयु का है यदि वह 21 वर्ष पूरा कर चुका है।

राज्य चुनाव आयोग: चुनावी प्रक्रियाओं की तैयारी की देखरेख, निर्देशन, नियंत्रण और पंचायतों के सभी चुनावों का प्रबंध राज्य चुनाव आयोग के अधिकार में होगा। इसमें गवर्नर द्वारा मनोनीत राज्य चुनाव आयुक्त सम्मिलित हैं। इसे राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की तर्ज पर हटाने के निर्धारित तरीके के अलावा नहीं हटाया जाएगा।

शक्तियां और कार्य: राज्य विधानमंडल पंचायतों को आवश्यकतानुसार ऐसी शक्तियां और अधिकार दे सकता है जिससे कि वह स्वायत्त संस्थाओं के रूप में कार्य करने में सक्षम हों।

वित्त संबंधी अधिकार निम्न है

- राज्य विधान राज्य संगठित कोष से पंचायतों को सहायता के रूप में अनुदान प्रदान करता है।
- पंचायत को वसूली, एकत्र और उपयुक्त कर निर्धारण, चुंगी कर, शुल्क लेने का अधिकार है।
- राज्य विधान पंचायतों को करों, चुंगी, मार्ग कर और शुल्क एकत्र करने का काम सौंपता है।

वित्त आयोग: राज्य का राज्यपाल प्रत्येक 5 वर्ष में पंचायतों की वित्तीय स्थिति के अवलोकन के लिए वित्त आयोग का गठन करेगा। यह आयोग राज्यपाल को निम्न सिफारिशें करेगा-

- राज्य के संगठित कोष से पंचायतों को दी जाने वाली सहायता अनुदान।
- करों, चुंगी, मार्गकर और शुल्कों का निर्धारण जो कि पंचायतों को सौंपे गए हैं।
- राज्य और पंचायतों में एकत्र किए गए कुल करों, चुंगी, मार्ग कर एवं एकत्रित शुल्कों का बंटवारा राज्य सरकार द्वारा हो।

राज्यपाल द्वारा आयोग को दिया जाने वाला कोई भी मामला जो कि पंचायतों के मजबूत वित्त के पक्ष में हो। राज्यपाल आयोग की सिफारिशों को कार्यवाही रिपोर्ट के साथ राज्य विधानसभा के समक्ष प्रस्तुत करेगा। केंद्रीय वित्त आयोग भी राज्य में पंचायतों के पूरक स्त्रोतों की राज्य के संगठित कोष से वृद्धि के लिए आवश्यक गणनाओं के बारे में सलाह देगा।

लेखा परीक्षण: राज्य विधानसभा पंचायतों द्वारा की गई y§lk (accounts) की देखदेख और उनके परीक्षण के लिए प्रावधान बना सकता है।

मुक्त किए गये राज्य व क्षेत्र: यह कानून जम्मू-कश्मीर, नागालैंड, मेघालय, मिजोरम और कुछ अन्य क्षेत्रों पर लागू नहीं होता। इन क्षेत्रों के अंतर्गत (अ) राज्यों के अनुसूचित जाति और जनजाति क्षेत्रों में (ब) मणिपुर के उन पहाड़ी क्षेत्रों में जहां जिला परिषद अस्तित्व में हो। (स) पं. बंगाल के दार्जिलिंग जिले जहां पर दार्जिलिंग गोरखा हिल परिषद अस्तित्व में है।

न्यायालय के हस्तक्षेप पर रोक: यह कानून पंचायत के चुनावी मामलों में हस्तक्षेप पर रोक लगाता है। यह घोषित करता है कि चुनाव क्षेत्र और इन चुनाव क्षेत्र में में सीटों के विभाजन संबंधी मुद्दों को न्यायालय के समक्ष पेश नहीं किया जा सकता।

11वीं अनुसूची: इसमें पंचायतों के कानून क्षेत्र के साथ 29 क्रियाशील विषय समाहित है-

- महिला एवं बाल विकास।
- सामाजिक समृद्धि जिसमें विकलांग व मानसिक रोगी की समृद्धि निहित है।
- कमजोर वर्ग की समृद्धि जिसमें विशेषकर अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति वर्ग शामिल हैं।
- लोक विभाजन पद्धति।
- सार्वजनिक संपत्ति की देखरेख।
- वनजीवन तथा कृषि खेती (वनों में)।
- लघु वन उत्पत्ति।
- लघु उद्योग, जिसमें खाद्य उद्योग सम्मिलित है।
- कृषि जिसमें कृषि विस्तार सम्मिलित है।
- भूमि विकास, भूमि सुधार लागू करना, भूमि संगठन एवं भूमि संरक्षण।
- लघु सिंचाई, जल प्रबंधन और नदियों के मध्य भूमि विकास।
- पशुपालन, दुग्ध व्यवसाय तथा मुर्गीपालन।
- मत्स्य उद्योग।
- खादी, ग्राम एवं कुटीर उद्योग।
- ग्रामीण विकास।
- पीने वाला पानी।
- ईंधन तथा पशु चारा।
- सड़कों, पुलों, तटों, जलमार्ग तथा अन्य संचार के साधन।
- ग्रामीण विद्युत जिसमें विद्युत विभाजन समाहित है।
- गैर परंपरागत ऊर्जा स्रोत।
- गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम।
- प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा संबंधी विद्यालय।
- यांत्रिक प्रशिक्षण एवं व्यावसायिक शिक्षा।
- वयस्क एवं गैर-वयस्क औपचारिक शिक्षा।
- पुस्तकालय।
- सांस्कृतिक कार्य।
- बाजार एवं मेले।
- स्वास्थ्य एवं स्वास्थ्य संबंधी संस्थाएं जिनमें अस्पताल, प्राथमिक व्यवस्था केंद्र तथा दवाखाने शामिल है।
- पारिवारिक समृद्धि।

EduBull.com

19. शहरी स्थानीय शासन

भारत में 'शहरी स्थानीय शासन' का अर्थ शहरी क्षेत्र के लोगों द्वारा चुने प्रतिनिधियों से बनी सरकार से हैं। शहरी स्थानीय शासन का अधिकार क्षेत्र उन निर्दिष्ट शहरी क्षेत्रों तक सीमित है जिसे प्रदेश सरकार द्वारा इस उद्देश्य के लिए निर्धारित किया गया है। सितंबर 1991 में पी.वी. नरसिम्हा राव सरकार ने लोकसभा में नया नगरपालिका बिल पेश किया। अंततः यह 74वें संविधान संशोधन कानून के रूप में शामिल हुआ और 1 जून, 1993 को प्रभाव में आया।

1992 का 74वां संशोधन कानून

इस कानून ने भारत के संविधान में नया भाग IX-A शामिल किया। इसे 'नगरपालिकाएं' नाम दिया गया और अनुच्छेद 243-P से 243-ZG तक प्रावधान शामिल किए गए। इस अधिनियम ने संविधान में एक नई 12वीं अनुसूची को भी जोड़ा। इसमें नगरपालिकाओं की 18 कार्यकारी विषय शामिल है।

प्रमुख विशेषताएं: अधिनियम की प्रमुख विशेषताएं निम्न हैं-

तीन प्रकार की नगरपालिकाएं: यह अधिनियम प्रत्येक राज्य में निम्न तीन तरह की नगरपालिकाओं की संरचना प्रदान करता है-

- नगर पंचायत (किसी भी नाम से) परिवर्तित क्षेत्र के लिए, जैसे वह क्षेत्र जिसे ग्रामीण क्षेत्र से शहरी क्षेत्र में परिवर्तित किया जा सके।
- नगरपालिका परिषद (छोटे शहरी क्षेत्रों के लिए)
- बड़े शहरी क्षेत्रों के लिए महानगरपालिका।

संरचना (बनावट): नगरपालिका के सभी सदस्य सीधे नगरपालिका क्षेत्र के लोगों द्वारा चुने जाएंगे। इस उद्देश्य के लिए, प्रत्येक नगरपालिकाओं को निर्वाचन क्षेत्रों (वार्ड) में बांटा जाएगा। राज्य विधानमंडल नगरपालिका के अध्यक्ष के निर्वाचन का तरीका प्रदान कर सकता है। यह नगरपालिका में निम्न सदस्यों के प्रतिनिधित्व की भी सहमति दे सकता है-

- वह व्यक्ति जिसे नगरपालिका के प्रशासन का विशेष ज्ञान अथवा अनुभव हो लेकिन उसे नगरपालिका की सभा में वोट डालने का अधिकार नहीं होगा।
- नगरपालिका क्षेत्र के निर्वाचन क्षेत्र का लोकसभा या राज्य विधानसभा के सदस्यों द्वारा पूर्ण या अंशतः प्रतिनिधित्व किया जा सकता है।
- राज्यसभा और राज्य विधानपरिषद के ऐसे सदस्य जो नगरपालिका क्षेत्र के साथ मतदाता के रूप में पंजीकृत हों।
- समिति के अध्यक्ष (वार्ड समितियों के अतिरिक्त)।

वार्ड समितियां:

तीन लाख या अधिक जनसंख्या वाली नगरपालिका के क्षेत्र के तहत एक या अधिक वार्डो को मिलाकर वार्ड समितियां बनती है।

पदों का आरक्षण :

यह एक्ट अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति को उनकी जनसंख्या और कुल नगरपालिका क्षेत्र की जनसंख्या के अनुपात में प्रत्येक नगरपालिका में आरक्षण प्रदान करता है। इसके अलावा यह महिलाओं को कुल सीटों के एक-तिहाई (इसमें अनुसूचित जाति व जनजाति महिलाओं से संबंधित आरक्षित सीटें भी हैं) सीटों पर आरक्षण प्रदान करता है।

नगरपालिकाओं का कार्यकाल: यह अधिनियम प्रत्येक नगरपालिका का कार्यकाल अवधि 5 वर्ष निर्धारित करता है।

अयोग्यताएं: नगरपालिका के चुने हुए सदस्य निम्न बातों पर अयोग्य घोषित किए जा सकते हैं-

- राज्य के विधान से संबंधित किसी चुनावी उद्देश्य के प्रभाव में अल्प अवधि के लिए किसी नियम के अंतर्गत।
- राज्य विधान द्वारा बनाए गए नियम के अंतर्गत, फिर भी किसी व्यक्ति को 25 वर्ष से कम आयु की शर्त पर अयोग्य घोषित नहीं किया जा सकेगा यदि वह 21 वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो।

राज्य चुनाव आयोग:

चुनावी प्रक्रियाओं के देख-रेख, निर्देशन एवं नियंत्रण और नगरपालिकाओं के सभी चुनावों का प्रबंधन राज्य चुनाव आयोग के अधिकार में होगा।

शक्तियां और कार्य:

राज्य विधानमंडल नगरपालिकाओं को आवश्यकतानुसार ऐसी शक्तियां और अधिकार दे सकता है जिससे कि वे स्वायत्त सरकारी संस्था के रूप में कार्य करने में सक्षम हों।

वित्त (राजस्व): संबंधी निम्न अधिकार है-

- नगरपालिका को वसूली, उपयुक्त कर निर्धारण, चुंगी, यात्री कर, शुल्क लेने का अधिकार है।
- राज्य संगठित कोष से नगरपालिकाओं को सहायता के रूप में अनुदान प्रदान करता है।

वित्त आयोग:

वित्त आयोग (जो पंचायतों के लिए गठित किया गया है।) भी प्रत्येक 5 वर्ष में नगरपालिकाओं की वित्तीय स्थिति का पुनरावलोकन करेगा और गवर्नर को निम्न सिफारिशें करेगा-

- राज्य और नगरपालिकाओं में एकत्र किए गए कुल करों, चुंगी, मार्ग एवं संग्रहित शुल्कों का बंटवारा राज्य सरकार द्वारा हो।
- करों, चुंगी, पथकर और शुल्कों का निर्धारण जो कि नगरपालिकाओं को सौंपे गए हैं।
- राज्य के संगठित कोष से नगरपालिकाओं को दिए जाने वाले सहायकता अनुदान।
- पंचायतों की वित्तीय स्थिति के सुधार के लिए आवश्यक गणना।
- राज्यपाल द्वारा आयोग को दिया जाने वाला कोई भी मामला जो पंचायतों के मजबूत वित्त के पक्ष में हो।

केंद्रीय वित्त आयोग भी राज्य में नगरपालिकाओं के पूरक स्रोतों की राज्य के संगठित कोष से वृद्धि के लिए (राज्य वित्त आयोग द्वारा दी गई सिफारिशों के आधार पर) आवश्यक गणनाओं के बारे में सलाह देगा।

मुक्त किए राज्य व क्षेत्र: यह अधिनियम राज्यों के अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति क्षेत्रों पर लागू नहीं होता। यह एक्ट प. बंगाल की दार्जिलिंग गोरखा परिषद की शक्तियों और कार्यवाही को प्रभावित नहीं करता।

जिला योजना समिति: प्रत्येक राज्य जिला स्तर पर एक जिला योजना समिति का गठन करेगा जो जिले की पंचायतों एवं नगरपालिकाओं द्वारा तैयार योजना को संगठित करेगी और जिला स्तर पर एक विकास योजना का प्रारूप तैयार करेगी।

महानगरीय योजना समिति: प्रत्येक महानगर क्षेत्र में विकास योजना के प्रारूप को तैयार करने हेतु एक महानगरीय योजना समिति होगी। राज्य विधानमंडल इस संबंध में निम्न प्रावधान बना सकता है-

- इन समिति के सदस्यों के निर्वाचन का तरीका,
- केंद्र सरकार, राज्य सरकार तथा अन्य संस्थाओं का इन कमेटियों में प्रतिनिधित्व,

इस एक्ट के अंतर्गत महानगरीय योजना समिति के 2/3 सदस्य महानगर क्षेत्र में नगरपालिका के निर्वाचित सदस्यों एवं पंचायतों के अध्यक्षों की जनसंख्या के अनुपात में समानुपाती होनी चाहिये।

न्यायालय के हस्तक्षेप पर रोक: यह अधिनियम नगरपालिकाओं के चुनाव संबंधी मामलों में न्यायालय के हस्तक्षेप पर रोक लगाता है। यह घोषित करता है कि चुनाव क्षेत्र और इन चुनाव क्षेत्र में सीटों के विभाजन संबंधी मुद्दों को न्यायालय के समक्ष पेश नहीं किया जा सकता।

12वीं सूची: इसमें नगरपालिकाओं के कानून क्षेत्र के साथ 18 क्रियाशील विषयवस्तु समाहित हैं।

- शहरी योजना (Urban planning) जिसमें शहर की योजना (town) सम्मिलित है।
- प्रयोग में लायी भूमि को नियमित करना और भवन निर्माण।
- आर्थिक एवं सामाजिक विकास योजना।
- सड़कें एवं पुल।
- घरेलू, औद्योगिक एवं व्यावसायिक उददेश्य के लिए जलापूर्ति।
- लोक सेवा, स्वास्थ्य संबंधी, सरंक्षणता और ठोस क्षय प्रबंधन।
- अग्नि सेवाएं।
- नगर वानिकी, पर्यावरण संरक्षण एवं पारिस्थितिकी संबंधी प्रगति।
- समाज के कमजोर वर्गों के हितों का संरक्षण, जिनमें मानसिक रोगी व विकलांग शामिल है।
- बस्तियों का सुधार तथा उन्नति।
- शहरी गरीबी का शमन।
- शहरी सुख-साधन व अनुकूलताओं का प्रावधान; जैसे- पार्क, बगीचे व खेल मैदान।
- सांस्कृतिक, शैक्षिक व सौंदर्य संबंधी पहलुओं को बढ़ावा।
- कब्र तथा कब्रिस्तान, दाहक्रिया व श्मशान घाट और विद्युत शवदाहगृह।
- मवेशियों के पीने के पानी के तालाब, पशु अत्याचार निवारण।
- जन्म व मृत्यु से संबंधित महत्वपूर्ण संख्यिकी।

- जन सुविधाएं जिनमें मार्गों पर विद्युत व्यवस्था, पार्किंग स्थल, बस स्टैंड तथा सार्वजनिक हित सम्मिलित हैं।
- कसाई खानों व चर्म शिल्पकारी का नियमन।

शहरी शासनों के प्रकार

महानगरपालिका

महानगरपालिकाओं का निर्माण बड़े शहरों जैसे दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, हैदराबाद, बंगलोर तथा अन्य शहरों के लिए है। यह संबंधित राज्य विधानमंडल के कानून द्वारा राज्यों में स्थापित हुई तथा भारत की संसद के एक्ट द्वारा केंद्रशासित क्षेत्र में, जिनमें एक साझा एक्ट सभी प्रदेश की महानगरपालिकाओं के लिए हो सकता है या सभी महानगरपालिकाओं के लिए अलग-अलग अधिनियम।

महानगरपालिकाओं के तीन अधिकार क्षेत्र जिनमें परिषद, स्थायी समिति तथा आयुक्त आते हैं। परिषद का प्रधान मेयर होता है। उपमेयर उसका सहायक होता है। वह परिषदों की सभा की अध्यक्षता करता है। स्थायी समिति परिषद के कार्य को सगुम बनाने के लिए गठित की जाती है जो कि आकार में बहुत बड़ी है। नगरपालिका आयुक्त परिषद और स्थायी समिति द्वारा लिए निर्णयों को लागू करने के लिए जिम्मेदार है अत: वह नगरपालिका का मुख्य अधिकारी है।

नगरपालिका

नगरपालिकाएं कस्बों और छोटे शहरों के प्रशासन के लिए स्थापित की गईं। महानगरपालिकाओं की तरह, यह भी राज्य विधानमंडल के संबंधित एक्ट द्वारा गठित की गई हैं और केंद्रशासित राज्यो में भारत की संसद के द्वारा गठित की गई हैं। यह अन्य नामों, जैसे नगरपालिका परिषद, नगरपालिका समिति, नगरपालिका बोर्ड, उपनगरीय नगरपालिका, शहरी नगरपालिका तथा अन्य नाम से भी जानी जाती हैं।

महानगरपालिका की तरह, नगरपालिका के पास भी परिषद, स्थायी समिति तथा मुख्य कार्यकारी परिषद नामक अधिकार क्षेत्र आते हैं। परिषद का प्रधान अध्यक्ष होता है। उपाध्यक्षता उसका सलाहकार होता है। मुख्य कार्यकारी अधिकारी नगरपालिका के प्रत्येक दिन के प्रशासन का जिम्मेदार होता है। वह राज्य सरकार द्वारा नियुक्त किया जाता है।

सूचीबद्ध क्षेत्रीय (Notified Area) समिति

सूचीबद्ध क्षेत्रीय समिति का गठन दो प्रकार के क्षेत्र के प्रशासन के लिए किया जाता है- औद्योगीकरण के कारण विकासशील कस्बा और वह कस्बा जिसने अभी तक नगरपालिका के गठन की आवश्यक शर्तें पूरी नहीं की हों लेकिन राज्य सरकार द्वारा वह महत्वपूर्ण माना गया है।

कस्बाई क्षेत्रीय समिति

कस्बाई क्षेत्रीय समिति छोटे कस्बों में प्रशासन के लिए गठित की जाती है। यह एक उपनगरपालिका आधिकारिक इकाई है और इसे सीमित नागरिक सेवाएं; जैसे निकासी, सड़कें, मार्गों में प्रकाश व्यवस्था और सरंक्षणता की जिम्मेदारी दी जाती है। यह राज्य विधानमंडल के एक अलग कानून द्वारा गठित किया जाता है।

छावनी परिषद

छावनी क्षेत्र में नागरिक जनसंख्या के प्रशासन के लिए छावनी परिषद की स्थापना की गई है। इसे 1924 के छावनी एक्ट के प्रावधान के अंतर्गत गठित किया गया है, जो केंद्र सरकार द्वारा बनाया गया कानून है। यह केंद्रीय सरकार के रक्षा मंत्रालय के प्रशासनिक नियंत्रण के अधीन कार्य करता है। अत: ऊपरी दी गई स्थानीय शहरी इकाइयों के विपरीत जो कि राज्य द्वारा प्रशासित और गठित की गई हैं, छावनी परिषद केंद्र सरकार द्वारा गठित और प्रशासित की जाती है।

इस समय, देश में 63 छावनी परिषदें है। एक छावनी परिषद में आंशिक रूप से निर्वाचित या मनोनीत सदस्य शामिल हैं। निर्वाचित सदस्य 3 वर्ष की अवधि के लिए जबकि मनोनीत सदस्य (कार्यालय के सेवानिवृत सदस्य) उस स्थान पर लंबे समय तक रहते हैं। छावनी कार्य नगरपालिका के समान होते हैं। छावनी परिषद के कार्यकारी अधिकारी की नियुक्ति भारत के राष्ट्रपति द्वारा होती है।

नगरीयकरण

इस तरह का शहरी प्रशासन वृहत सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा स्थापित किया जाता है। जो उद्योगों के निकट बनी आवासीय क्षेत्र में रहने वाले अपने कर्मचारियों को सुविधाएं प्रदान करती है। यह उपक्रम नगर के प्रशासन की देखरेख के लिए एक नगर प्रशासक नियुक्त करता है।

बंदरगाह संघ

बंदरगाह संघ की स्थापना बंदरगाह क्षेत्रों जैसे मुंबई, कोलकाता, चेन्नई और अन्य में मुख्य रूप से दो उद्देश्यों के लिए की गई-

- बंदरगाहों की सुरक्षा व व्यवस्था।
- नागरिक सुविधाएं प्रदान करना।

बंदरगाह संघ का गठन संसद के एक्ट द्वारा किया गया है। निर्वाचित और गैरनिर्वाचित दोनों प्रकार के सदस्य सम्मिलित हैं।

विशेष उद्देश्य हेतु अभिकरण :

इन 7 क्षेत्रीय आधार वाली शहरी इकाइयों (या बहुउद्देशीय इकाइयां) के साथ, राज्यों ने विशेष कार्यों के नियंत्रण हेतु विशेष प्रकार के अभिकरणों (Agencies) का गठन किया है जो महानगरपालिकाओं या नगरपालिकाओं या अन्य स्थानीय शासनों के समूह से संबंधित है। कुछ इस तरह की इकाईयां इस प्रकार हैं–

- नगरीय सुधार संघ (trusts)।
- शहरी सुधार शक्ति (authorities)।
- जलापूर्ति एवं निकासी बोर्ड।
- आवासीय बोर्ड।
- पर्यावरण नियंत्रण बोर्ड।
- विद्युत आपूर्ति बोर्ड।
- शहरी यातायात बोर्ड।

यह कार्यकारी स्थानीय इकाईयां, कानूनी इकाइयों के रूप में राज्य विधानमंडल के विशेष प्रस्ताव द्वारा स्थापित की जाती हैं।

EduBull.com

20. निर्वाचन एवं निर्वाचन आयोग

निर्वाचन

निर्वाचन व्यवस्था

निर्वाचन व्यवस्था संविधान के भाग - XV में अनुच्छेद 324 से 329 तक चुनावों या निर्वाचन से संबंधित निम्न प्रावधानों का उल्लेख है-

- संविधान के अनुसार संसद अथवा राज्य विधायिका के चुनावों पर प्रश्नचिह्न नहीं लगाया जा सकता, केवल एक चुनाव याचिका जो ऐसे प्राधिकारी के समक्ष ऐसे तरीके से प्रस्तुत की जाए जिसका प्रावधान विधायिका ने किया हो। 1966 से चुनावी याचिका पर सुनवाई अकेले उच्च न्यायालय करता है किंतु अपील का अधिकार क्षेत्र केवल उच्चतम न्यायालय में है।
- कोई व्यक्ति मतदाता सूची में नामित होने के लिए केवल ध र्म, नस्ल, लिंग अथवा इसमें से किसी एक के आधार पर अयोग्य नहीं हो सकता।
- संसद उन सभी व्यवस्थाओं का प्रावधान कर सकती है जो संसद तथा राज्य विधायिकाओं के चुनाव मतदाता सूची की तैयारियों, निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन तथा सभी मामले जो संवैधानिक व्यवस्थाओं की सुरक्षा के लिए आवश्यक हैं।
- राज्य विधायिका भी स्वयं के चुनावों से संबंधित सभी मामलों में, मतदाता सूची की तैयारियों के संबंध में तथा संबंधित संवैधानिक व्यवस्थाओं की सुरक्षा के लिए आवश्यक सभी मामलों में प्रावधान बना सकती है।
- लोकसभा तथा राज्य विधानसभा के लिए चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर होता है।
- संविधान घोषणा करता है कि निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन अथवा इन निर्वाचन क्षेत्रों के लिए आबंटित स्थानों से संबंधित कानूनों पर न्यायालय में प्रश्न नहीं उठाया जा सकता। परिणामस्वरूप परिसीमन आयोग द्वारा पारित आदेश अंतिम होते हैं तथा उन्हें किसी भी न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती।
- संविधान (अनु. 324) देश में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों के लिए स्वतंत्र चुनाव आयोग या निर्वाचन आयोग की व्यवस्था करता है। संसद, राज्य विधायिका, राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति के चुनावों के अधीक्षण, निर्देशन तथा प्रबंध की शक्ति चुनाव आयोग में निहित है। वर्तमान समय में चुनाव आयोग में एक मुख्य चुनाव आयुक्त तथा दो चुनाव आयुक्त होते हैं।

चुनाव सुधार

मतदान की उम्र में कमी: 1988 के 61वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा लोकसभा तथा विधानसभा चुनावों के लिए मतदान की उम्र को 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष कर दिया गया।

प्रस्तावकों की संख्या में वृद्धि: 1988 में राज्यसभा तथा राज्य विधानपरिषद चुनाव के लिए नामांकन पत्र के प्रस्ताव के लिए आवश्यक निर्वाचकों की संख्या को बढ़ाकर निर्वाचन क्षेत्र की जनसंख्या का दस प्रतिशत अथवा 10 निर्वाचक, जो कम हो, कर दी गई।

इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन: 1989 में चुनावों में इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (ईवीएस) के इस्तेमाल का प्रावधान किया गया। ईवीएम का प्रथम बार प्रयोग प्रायोगिक तौर पर 1998 में राजस्थान, मध्यप्रदेश तथा दिल्ली विधानसभा के चुनावों में चुनिंदा निर्वाचन क्षेत्रों में किया गया था। ईवीएम का पहला प्रयोग (पूरे राज्य में) 1999 में गोवा विधानसभा के आम चुनावों में किया गया था।

मतदान केंद्रों में कब्जा: 1989 में प्रावधान किया गया कि मतदान केंद्रों में लूट के कारण मतदान को स्थागित अथवा रद्द किया जा सकता है।

उम्मीदवारों के नाम की सूची बनाना: चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों के नाम की सूची बनाने के लिए उनको तीन श्रेणियों में विभाजित किया जाता है। ये इस प्रकार हैं-

- दूसरे (निर्दलीय) उम्मीदवार।
- मान्यता प्राप्त दलों के उम्मीदवार।
- गैर मान्यता प्राप्त पंजीकृत उम्मीदवार।

राष्ट्रीय सम्मान अधिनियम के अपमान हेतु अयोग्यता: राष्ट्रीय सम्मान का अपमान करने पर अयोग्यता संबंधी कानून के तहत निम्नलिखित आरोपों में दोषी पाए जाने वाला व्यक्ति संसद तथा विधायिका के चुनाव लड़ने के लिए छह वर्षों के लिए अयोग्य होगा।

- राष्ट्रीय गान को गाने से रोकने का आरोप।
- भारतीय संविधान के अपमान का आरोप।
- राष्ट्रीय ध्वज के अपमान का आरोप।

शराब की बिक्री पर रोक: शराब या अन्य कोई मादक पदार्थ चुनाव समाप्त होने के 48 घंटे पूर्व तक चुनावी क्षेत्र में सार्वजनिक अथवा निजी किसी दुकान, खाद्य स्थल, होटल अथवा किसी अन्य स्थान पर, नहीं बेचा जा सकता।

प्रस्तावकों की संख्या: मान्यता प्राप्त दल का समर्थन प्राप्त न होने पर किसी संसदीय या विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र से चुनाव लड़ने के इच्छुक उम्मीदवार के नामांकन पत्र पर उस निर्वाचन क्षेत्र के 10 मतदाताओं के हस्ताक्षर एक प्रस्तावक की तरह होने चाहिये। किंतु किसी मान्यता प्राप्त राजनैतिक दल का समर्थन प्राप्त उम्मीदवार के लिए मात्र एक प्रस्तावक ही आवश्यक है।

उम्मीदवार की मृत्यु: चुनाव से ठीक पहले उम्मीदवार की मृत्यु होने पर चुनाव रद्द नहीं किया जाता। अपितु पीड़ित उम्मीदवार से संबंधित दल का दूसरे उम्मीदवार का प्रस्ताव करने के लिए सात दिन का समय दिया जाता है।

उप-चुनावों की सीमा: संसद अथवा राज्य विधानसभा में स्थान रिक्त होने पर उप चुनाव छह माह के भीतर करा लेना चाहिए किंतु दो मामलों में यह शर्त लागू नहीं होती-

- जब चुनाव आयोग केंद्र सरकार के परामर्श से यह प्रामाणित कर दे कि उपरोक्त समय में उपचुनाव करा पाना कठिन है।
- जहां सदस्य, जिसका स्थान भरा जाता है, का शेष कार्यकाल एक वर्ष से कम बचा हो, अथवा

मतदान के दिन कर्मचारियों को अवकाश: किसी भी व्यापार, कार्य, उद्योग अथवा किसी दूसरे संस्थान में कार्यरत पंजीकृत मतदाता को मतदान के दिन वैतनिक अवकाश दिया जाता है।

दो निर्वाचन क्षेत्रों का प्रतिबंध: कोई भी उम्मीदवार साथ-साथ हो रहे आम चुनाव अथवा उपचुनाव में 2 से ज्यादा संसदीय अथवा विधानसभा निर्वाचन क्षेत्रों से चुनाव लड़ने के लिए योग्य नहीं होगा।

प्रभावी प्रचार समय में कमी: नाम वापसी की अंतिम तिथि तथा मतदान की तिथि के मध्य न्यूनतम अंतर 20 दिन से घटाकर 14 दिन कर दिया गया है।

राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति का चुनाव: 1997 में राष्ट्रपति पद का चुनाव लड़ने के लिए प्रस्तावकों और अनुमोदक मतदाताओं की संख्या 10 से बढ़ाकर 50 तथा उपराष्ट्रपति पद का चुनाव लड़ने के लिए प्रस्तावकों तथा अनुमोदक मतदाताओं की संख्या 5 से बढ़ाकर 20 कर दी गई। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति दोनों पदों के चुनाव में निरर्थक उम्मीदवारों को हतोत्साहित करने के लिए जमानत राशि 2500 रु. से बढ़ाकर 15000 रु. कर दी गई।

डाक मतपत्र द्वारा मतदान: 1999 में कुछ निश्चित वर्ग के व्यक्तियों के मतदान के लिए डाक मतपत्र का प्रावधान किया गया।

निर्वाचन आयोग

निर्वाचन आयोग एक स्थायी व स्वतंत्र संस्था है। इसका गठन भारत के संविधान द्वारा देश में साफ-सुथरे चुनाव कराने के लिए किया गया। संविधान के अनुच्छेद 324 के अनुसार संसद, राज्य विधानमंडल, राष्ट्रपति के पदों के निर्वाचन के लिए संचालन, निर्देशन व नियंत्रण की जिम्मेदारी चुनाव आयोग की है। उल्लेखनीय है कि राज्यों में होने वाले पंचायतों व निगम चुनावों में चुनाव आयोग का कोई संबंध नहीं है। इसके लिए भारत के संविधान में अलग राज्य चुनाव आयोग की व्यवस्था की गई है।

संगठन या रचना

संविधान के अनुच्छेद-324 में चुनाव आयोग के संबंध में निम्नलिखित प्रावधान हैं:

- चुनाव आयोग का गठन मुख्य चुनाव आयुक्त, अन्य निर्वाचन आयुक्त एवं समय-समय पर राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त आयुक्तों से मिलकर होता है।
- मुख्य निर्वाचन आयुक्त और अन्य निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जानी चाहिए।
- जब कोई अन्य निर्वाचन आयुक्त इस प्रकार नियुक्त किया जाता है तब मुख्य निर्वाचन अधिकारी चुनाव आयोग के अध्यक्ष के रूप में काम करेगा।
- राष्ट्रपति, चुनाव आयोग की सलाह पर प्रादेशिक आयुक्तों की नियुक्ति कर सकता हैं, जिसे वह चुनाव आयोग की सहायता के लिए आवश्यक समझे।

मुख्य निर्वाचन आयुक्त व दो अन्य निर्वाचन आयुक्तों के पास समान शक्ति होती है और वेतन, भत्ता व अन्य दूसरे लाभ भी एकसमान होते हैं जो सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश के समान होते हैं। ऐसी स्थिति में जब मुख्य निर्वाचन आयुक्त व दो अन्य निर्वाचन आयुक्तों के बीच विचार में मतभेद होता है तो आयोग बहुमत के आधार पर निर्णय करता है।

उनका कार्यकाल छह वर्ष का होता है या 65 वर्ष की आयु तक, जो पहले हो। वे किसी भी समय त्यागपत्र दे सकते हैं या उन्हें कार्यकाल समाप्त होने से पूर्व भी हटाया जा सकता है।

स्वतंत्रता

संविधान के अनुच्छेद - 324 में चुनाव आयोग के स्वतंत्र व निष्पक्ष कार्य करने के लिए निम्नलिखित प्रावधान हैं-

- मुख्य निर्वाचन आयुक्त को अपनी निर्धारित पदावधि में काम करने की सुरक्षा है। मुख्य निर्वाचन आयुक्त को उसके पद से उसी रीति से व उन्हीं आधारों पर ही हटाया जा सकता है जिस रीति व आधारों पर सर्वोच्च न्यायालय के

न्यायाधीशों को हटाया जाता है, अन्यथा नहीं। दूसरे शब्दों में, उन्हें दुर्व्यवहार, अयोग्यता के आधार पर संसद के दोनों सदनों द्वारा प्रस्ताव पारित करने के बाद राष्ट्रपति द्वारा हटाया जा सकता है।

- अन्य निर्वाचन आयुक्त या प्रादेशिक आयुक्त मुख्य निर्वाचन आयुक्त की सिफारिश पर ही हटाया जा सकता है, अन्यथा नहीं।
- मुख्य निर्वाचन आयुक्त की सेवा की शर्तों में उनकी नियुक्ति के पश्चात उसके लिए अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

शक्ति और कार्य

संसद, राज्य के विधानमंडल, राष्ट्रपति व उपराष्ट्रपति के पदों के निर्वाचन के संदर्भ में चुनाव आयोग की शक्ति व कार्यों को तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है–

- अर्द्ध-न्यायिक।
- सलाहकारी।
- प्रशासनिक

विस्तार में शक्ति व कार्य इस प्रकार हैं-

- शरारत, मतदान केंद्र लूटना, हिंसा व अन्य अनियमितताओं के आधार पर चुनाव रद्द करना।
- चुनाव के मद्देनजर राजनीतिक पार्टियों को पंजीकृत करना तथा चुनाव में प्रदर्शनों के आधार पर उसे राष्ट्रीय या राज्य पार्टी का दर्जा देना।
- समय-समय पर निर्वाचन-नामावली तैयार करना और सभी योग्य मतदाताओं को पंजीकृत करना।
- चुनाव की तारीख और सारणी निर्धारित करना एवं नामांकन पत्रों का परीक्षण करना।
- निर्वाचन व्यवस्था से संबंधित विवाद की जांच-परख के लिए अधिकारी नियुक्त करना।
- चुनाव के वक्त दलों व उम्मीदवारों के लिए आचार संहिता निर्मित करना।
- संसद सदस्य की अयोग्यता से संबंधित मामलों पर राष्ट्रपति को सलाह देना।
- राजनीतिक दलों को मान्यता देना और उन्हें चुनाव चिह्न देना।
- विधानपरिषद के सदस्यों की अयोग्यता से संबंधित मसलों पर राज्यपाल को परामर्श देना।
- संसद के परिसीमन आयोग अधिनियम के आधार पर समस्त भारत के निर्वाचन क्षेत्रों का भू-भाग निर्धारित करना।

EduBull.com

21. संघ लोक सेवा आयोग एवं राज्य लोक सेवा आयोग

संघ लोक सेवा आयोग भारत का केंद्रीय भर्ती अभिकरण (संस्था) है। यह स्वतंत्र संवैधानिक निकाय या संस्था है क्योकि इसका गठन संविधानिक प्रावधानों के माध्यम से किया गया है। संविधान के 14वें भाग में अनुच्छेद 315 से 323 में संघ लोक सेवा आयोग (यूपीएससी) की स्वतंत्रता व शक्तियां व कार्य के अलावा इसके संयोजन तथा सदस्यों की नियुक्तियां व बर्खास्तगी का विस्तार से वर्णन किया गया है।

गठन

संघ लोक सेवा आयोग में एक अध्यक्ष व कई सदस्य होते हैं, जो भारत के राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किए जाते हैं। संविधान में आयोग की सदस्य संख्या का उल्लेख नहीं है। यह राष्ट्रपति के ऊपर छोड़ दिया गया है जो आयोग का संयोजन निर्धारित करता है। साधारणतया आयोग में अध्यक्ष समेत नौ से ग्यारह सदस्य होते हैं। संविधान ने राष्ट्रपति को अध्यक्ष तथा सदस्यों की सेवा की शर्तें निर्धारित करने का अधिकार दिया है।

आयोग के अध्यक्ष पद ग्रहण करने की तारीख से छह वर्ष की अवधि तक या 65 वर्ष की आयु तक, इनमें से जो भी पहले हो, अपना पद धारण करता है। वे कभी भी राष्ट्रपति को संबोधित कर त्यागपत्र दे सकते हैं। राष्ट्रपति दो परिस्थितियों में संघ लोक सेवा आयोग के एक सदस्य को कार्यवाहक अध्यक्ष नियुक्त कर सकता है–

- जब अध्यक्ष अपना काम अनुपस्थिति या अन्य दूसरे कारणों से नहीं कर पा रहा हो।
- जब अध्यक्ष का पद रिक्त हो।

पद से हटाना

राष्ट्रपति संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या दूसरे सदस्यों को निम्नलिखित परिस्थितियों में हटा सकता है-

- अगर राष्ट्रपति ऐसा समझता है कि वह मानसिक या शारीरिक अक्षमता के कारण पद पर बने रहने योग्य नहीं है।
- अगर उसे दिवालिया घोषित कर दिया जाता है।
- अपनी पदावधि के दौरान अपने पद के कर्त्तव्यों के बाहर किसी से वेतन नियोजन में लगा हो।

इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति आयोग के अध्यक्ष या दूसरे सदस्यों को उनके कदाचार के कारण भी हटा सकता है। किंतु ऐसे मामलों में राष्ट्रपति को जांच के लिए सर्वोच्च न्यायालय में भेजना होता है। अगर सर्वोच्च न्यायालय जांच के बाद बर्खास्त करने का परामर्श का समर्थन करता है तो राष्ट्रपति, अध्यक्ष या दूसरे सदस्यों को हटा सकते हैं। संविधान के इस प्रावधान के अनुसार सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस मामले में दी गई सलाह राष्ट्रपति के लिए बाध्य है। संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या अन्य सदस्य को कदाचार का दोषी माना जाएगा, अगर वह (क) भारत सरकार या राज्य सरकार की किसी संविदा या करार में संबंधित है। (ख) निगमित कंपनी के सदस्य और कंपनी के अन्य सदस्यों के साथ सम्मिलित रूप से संविदा या करार में लाभ के लिए भाग लेता है।

स्वतंत्रता

संविधान में संघ लोक सेवा आयोग को निष्पक्ष व स्वतंत्र कार्य करने के लिए निम्नलिखित प्रावधान हैं–

- संघ लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष या सदस्य कार्यकाल के बाद के पुन: नहीं नियुक्त किया जा सकता (दूसरे कार्यकाल के लिए योग्य नहीं)।
- संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या सदस्यों को राष्ट्रपति संविधान में वर्णित आधारों पर ही हटा सकते हैं।
- संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या सदस्य को वेतन, भत्ता व पेंशन सहित सभी खर्चे भारत की संचित निधि से मिलते हैं।
- संघ लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष (कार्यकाल के बाद) भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी और नियोजन (नौकरी) का पात्र नहीं हो सकता।
- हालांकि अध्यक्ष या सदस्य की सेवा की शर्तें राष्ट्रपति तय करते हैं लेकिन नियुक्ति के बाद अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

कार्य

संघ लोक सेवा आयोग के कार्यों का वर्णन निम्नानुसार है-

- अल्पकालीन नियुक्ति एक वर्ष से अधिक तक व नियुक्तियों की नियमितकरण से संबंधित विषय।
- सेवा के विस्तार व कुछ सेवानिवृत नौकरशाहों की पुनर्नियुक्ति से संबंधित मसला।
- संघ लोक सेवा आयोग हर वर्ष अपने कामों की रिपोर्ट राष्ट्रपति को देता है।
- संघ लोक सेवा आयोग राज्य (दो या अधिक राज्य द्वारा अनुरोध करने) को किसी ऐसी सेवाओं के लिए जिसके लिए विशेष अर्हता वाले अभ्यर्थी अपेक्षित है, उनके लिए संयुक्त भर्ती की योजना व प्रवर्तन करने में सहायता करता है।

- राज्यपाल की अनुमति व राष्ट्रपति की स्वीकृति के बाद राज्य की जरूरतों को पूरा करना।
- निम्नलिखित विषयों में परामर्श देता है-
- सिविल सेवाओं और सिवलि पदों के लिए भर्ती की पद्धतियों से संबंधित सभी विषयों पर।
- सिविल सेवाओं और पदों पर नियुक्ति करने में, प्रोन्नति तथा एक सेवा से दूसरी सेवा में तबादला या प्रतिनियुक्ति के लिए अभ्यर्थियों की उपयुक्तता पर संबंधित विभाग प्रोन्नति की सिफारिश करता है और संघ लोक सेवा आयोग से अनुमोदित करने का आग्रह करता है।
- यह अखिल भारतीय सेवाओं, केंद्रीय सेवाओं व केंद्र प्रशासित क्षेत्रों की लोक सेवाओं में नियुक्ति के लिए परीक्षाओं का संचालन करता है।

सीमाएं

निम्नलिखित विषय यूपीएसी के कार्यों के अधिकार क्षेत्र के बाहर हैं।

- राष्ट्रपति संघ लोक सेवा आयोग के दायरे से किसी पद, सेवा व विषय को हटा सकता है।
- सेवाओं व पदों पर नियुक्ति के लिए अनसूचित जाति व अनुसूचित जनजातियों के दावों को ध्यान में रखने हेतु।
- आयोग या प्राधिकरण की अध्यक्षता या सदस्यता, राजनयिक की उच्च पद, ग्रुप सी व डी सेवाओं के अधिकतर पदों के चयन से संबंधित मामले।
- पिछड़ी जाति की नियुक्तियों पर आरक्षण देने के मसले पर।

कर्मचारी चयन आयोग

कर्मचारी चयन आयोग एक केंद्रीकृत संस्था है जिस पर केंद्र सरकार के अंतर्गत मध्यम व निम्न सेवाओं के लिए लोगों की नियुक्ति करने की जिम्मेदारी है। एसएससी का गठन 1975 में केंद्र सरकार द्वारा एक कार्यकारी प्रस्ताव के आधार पर किया गया। इसे कार्मिक मंत्रालय से जुड़े कार्यालय की हैसियत प्राप्त है और यह परामर्शदात्री संस्था के तौर पर काम करती है। इसमें अध्यक्ष, दो सदस्य, सचिव सह परीक्षा नियंत्रक होते हैं। अध्यक्ष या सदस्य का कार्यकाल पांच वर्ष का या 62 वर्ष की आयु तक जो पहले हो, का होता है। उनकी नियुक्ति केंद्र सरकार करती है।

राज्य लोक सेवा आयोग

केंद्र के संघ लोक सेवा आयोग के समानांतर राज्यों में राज्य लोक सेवा आयोग (एसपीएससी) है। संविधान के 14वें भाग में अनुच्छेद 315 से 323 में राज्य लोक सेवा आयोग की स्वतंत्रता व शक्तियों के अलावा इसके गठन तथा सदस्यों की नियुक्तियों व बर्खास्तगी इत्यादि का उल्लेख किया गया है।

गठन

राज्य लोक सेवा आयोग में एक अध्यक्ष व अन्य सदस्य होते हैं। जिन्हें राज्य का राज्यापाल नियुक्त करता है। संविधान में आयोग की सदस्य संख्या का उल्लेख नहीं किया गया है। यह राज्यपाल के ऊपर छोड़ दिया गया है। इसके अतिरिक्त, आयोग के सदस्यों की वांछित योग्यता का भी जिक्र नहीं किया गया है परंतु यह आवश्यक है कि आयोग के आधे सदस्यों को भारत सरकार या राज्य सरकार के अधीन कम से कम 10 वर्ष काम करने का अनुभव हो।

आयोग के अध्यक्ष व सदस्य पद ग्रहण करने की तारीख से छह वर्ष की अवधि तक या 62 वर्ष की आयु तक, इनमें जो भी पहले हो, अपना पद धारण कर सकते हैं राज्यपाल दो परिस्थितियों में राज्य लोक सेवा आयोग के किसी एक सदस्य को कार्यवाहक अध्यक्ष नियुक्त कर सकते हैं-

- जब अध्यक्ष अपना कार्य अनुपस्थिति या अन्य दूसरे कारणों की वजह से नहीं कर पा रहा हो।
- जब अध्यक्ष का पद रिक्त हो।

पद से हटाया जाना

भले ही राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष व सदस्य की नियुक्ति राज्यपाल करते हैं लेकिन इन्हें केवल राष्ट्रपति ही हटा सकता हैं (राज्यपाल नहीं)। राष्ट्रपति उन्हें उसी आधार पर हटा सकते हैं जिन आधारों पर यूपीएससी के अध्यक्ष व सदस्यों को हटाया जाता है। अत: उन्हें निम्नलिखित आधारों पर हटाया जा सकता है-

- अगर राष्ट्रपति यह समझता है कि वह मानसिक या शारीरिक शैथिल्य के कारण पद पर बने रहने के योग्य नहीं है।
- अगर उसे दिवालिया घोषित कर दिया जाता है।
- अपनी पदावधि के दौरान अपने पद के कर्त्तव्यों के बाहर किसी सवेतन नियोजन में लगा हो।

इसके अलावा राष्ट्रपति राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या दूसरे सदस्यों को उनके कदाचार के कारण भी हटा सकता है परंतु ऐसे मामलों को जांच के लिए सर्वोच्च न्यायालय के पास भेजना होता है। संविधान के अनुसार, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस मामले में दी गई सलाह राष्ट्रपति के लिए बाध्य है।

स्वतंत्रता

संघ लोक सेवा आयोग की तरह ही संविधान में राज्य लोक सेवा आयोग के निष्पक्ष व स्वतंत्र कार्य करने के लिए निम्नलिखित प्रावधान हैं-

- राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या सदस्य (कार्यकाल के बाद) को पुनः नियुक्त नहीं किया जा सकता (यानी दूसरे कार्यकाल के योग्य नहीं)।
- अध्यक्ष या सदस्य की सेवा की शर्तें राज्यपाल तय करता है। अतः नियुक्ति के बाद अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जा सकता है।
- राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या सदस्य को वेतन, भत्ता व पेंशन सहित सभी खर्चे राज्य की संचित निधि से मिलते हैं।
- राज्य लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष (कार्यकाल के बाद) संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या सदस्य तथा दूसरे राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या सदस्य तथा दूसरे राज्य लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष बनने का पात्र होगा।
- राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या सदस्यों को राष्ट्रपति संविधान में वर्णित आधारों पर ही हटा सकता है।

कार्य

राज्य लोक सेवा आयोग राज्य सेवओं के लिए वही काम करता है जो संघ लोक सेवा आयोग केंद्रीय सेवाओं के लिए करता है–

- सिविल सेवाओं और पदों पर स्थानांतरण करने में, प्रोन्नति, या एक सेवा से दूसरी सेवा में तबादला या प्रतिनियुक्ति के लिए अभ्यर्थियों की उपयुक्ता पर ।
- राज्य सरकार के अधीन काम करने के दौरान किसी व्यक्ति को हुई हानि को लेकर पेंशन का दावा करना। राज्य लोक सेवा आयोग हर वर्ष अपने कार्यों की रिपोर्ट राज्यपाल को देता है। राज्यपाल इस रिपोर्ट के साथ-साथ ऐसे ज्ञापन विधान मंडल के समक्ष रखता है जिसमें आयोग द्वारा अस्वीकृत मामले और उनके कारणों का वर्णन किया जाता है।
- यह राज्य की सेवाओं में नियुक्ति के लिए परीक्षाओं का संचालन करता है।
- निम्नलिखित विषयों पर परामर्श देता है-
- सिविल सेवाओं और सिविल पदों के लिए भर्ती की पद्धतियों से संबंधित सभी विषयों पर।
- सिवलि सेवाओं और पदों पर नियुक्ति करने में तथा सेवा प्रोन्नति व एक सेवा से दूसरे सेवा में तबादले के लिए अनुसरण किए जाने वाले सिद्धांत के संबंध में।

सीमाएं

निम्नलिखित विषयों को राज्य लोक सेवा आयोग के अधि कार क्षेत्र के बाहर रखा गया है। दूसरे शब्दों में, निम्नलिखित विषयों पर राज्य लोक सेवा आयोग से संपर्क नहीं किया जा सकता–

- सेवाओं में नियुक्ति पर अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के दावों को ध्यान में रखने के मसले पर।
- पिछड़ी जातियों की नियुक्तियों या आरक्षण के मसले पर।

राज्यपाल राज्य लोक सेवा आयोग के दायरे से किसी पद, सेवा या विषय को हटा सकता है।

संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग

दो या इससे अधिक राज्यों के लिए संविधान में संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग की व्यवस्था की गई है। संघ लोक सेवा आयोग और राज्य लोक सेवा आयोग का गठन जहां सीधे संविधान द्वारा किया गया है। वहीं संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग का गठन राज्य विधानमंडल की आग्रह से संसद द्वारा किया गया है। इस तरह संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग एक वैधानिक संस्था है न कि संवैधानिक। संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष व सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। उनका कार्यकाल छह वर्ष अथवा 62 वर्ष की आयु, जो पहले हो, तक होता है। उन्हें राष्ट्रपति द्वारा बर्खास्त किया या हटाया जा सकता है। वे किसी भी समय राष्ट्रपति को त्यागपत्र देकर पदमुक्त हो सकते हैं। संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग वार्षिक प्रगति रिपोर्ट संबंधित राज्यपालों को सौंपता है। प्रत्येक राज्यपाल इसे राज्य विधानमंडल के समक्ष प्रस्तुत करता है।

22. वित्त आयोग

भारत के संविधान में अनुच्छे 280 के तहत वित्त आयोग की व्यवस्था की गई है। इसका गठन राष्ट्रपति द्वारा हर पांचवें वर्ष या आवश्यकतानुसार उससे पहले किया जाता है।

वित्त आयोग में एक अध्यक्ष और चार अन्य सदस्य होते हैं, जिनकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। उनका कार्यकाल राष्ट्रपति के आदेश के तहत तय होता है। उनकी पुर्ननियुक्ति भी हो सकती है।

संविधान ने संसद को इन सदस्यों की योग्यता का निर्धारण करने का अधिकार दिया है। इसी के तहत संसद ने आयोग के अध्यक्ष एवं सदस्यों की विशेष योग्यताओं का निर्धारण किया है। अध्यक्ष सार्वजनिक मामलों का अनुभवी होना चाहिए और अन्य चार सदस्यों को निम्नलिखित में से चुना जाना चाहिए-

- किसी उच्च न्यायालय का न्यायाधीश या इस पद के लिए योग्य व्यक्ति।
- ऐसा व्यक्ति जिसे भारत के लेखा एवं वित्त मामलों का विशेष ज्ञान हो।
- एक ऐसा व्यक्ति जिसे प्रशासन या वित्तीय मामलों का व्यापक अनुभव हो।
- ऐसा व्यक्ति जो अर्थशास्त्र का विशेष ज्ञाता हो।

कार्य

निम्नलिखित मामलों में भारत के राष्ट्रपति द्वारा कुछ संस्तुतियों के लिए वित्त आयोग की आवश्यकता महसूस की जाती है-

- करों के सही बंटवारे और राज्यों एवं केंद्र के बीच करों के सही निर्धारण के लिए।
- केंद्र द्वारा राज्यों को प्रदान की जाने वाली सहायता राशि के सही निर्धारण (निश्चित कोष से अलग) के लिए।
- राज्य वित्त आयोग की संस्तुतियों के आधार पर नगर पालिकाओं, पंचायत आदि के लिए नियमित राशि व आवश्यकता के अनुरूप उसका आकलन और संसाधनों का निर्धारण।
- राष्ट्रपति द्वारा भेजे गए तर्कसम्मत वित्तीय-मामले या अन्य कार्यों के लिये।

आयोग अपनी रिपोर्ट राष्ट्रपति को सौंपता है, जो इसे संसद के दोनों सदनों में रखता है।

यह स्पष्ट करना जरूरी होगा कि वित्त आयोग की सिफारिशों की प्रकृति सलाह की तरह होती है और इनको मानने के लिए सरकार बाध्य नहीं होती। यह केंद्र सरकार पर निर्भर करता है कि वह राज्य सरकारों को दी जाने वाली सहायता के संबंध में आयोग की सिफारिशों को लागू करे।

वित्त आयोग के अध्यक्ष

क्र.सं	आयोग	वर्ष	अध्यक्ष
1.	प्रथम वित्त आयोग	1951-1953	के.सी. नियोगी
2.	द्वितीय वित्त आयोग	1956-1957	के. संथानाम
3.	तीसरा वित्त आयोग	1960-1962	ए.के. चन्दा
4.	चौथा वित्त आयोग	1964-1965	डॉ. पी.वी. राजमन्नार
5.	पांचवा वित्त आयोग	1968-1969	महावीर त्यागी
6.	छठा वित्त आयोग	1972-1973	पी. ब्रह्मानंद रेड्डी
7.	सातवां वित्त आयोग	1977-1978	जे.पी. सेलट
8.	आठवां वित्त आयोग	1982-1984	वाई.वी. चव्हाण
9.	नौवां वित्त आयोग	1987-1989	एन.के.पी. साल्वे
10.	दसवां वित्त आयोग	1998-1994	के.सी. पंत
11.	ग्यारहवां वित्त आयोग	1998-2000	ए.एम. खुसरो
12.	बारहवां वित्त आयोग	2002	डॉ. सी. रंगराजन
13.	तेरहवाँ	2007	विजय एल. केलकर

भारत का नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक

भारत के संविधान (अनुच्छेद 148) में नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के स्वतंत्र पद की व्यवस्था की गई है जिसे संक्षेप में 'महालेखा परीक्षक' कहा गया है। यह भारतीय लेखापरीक्षण और लेखाविभाग का मुखिया होता है। यह लोगों की जेब का संरक्षक होने के साथ-साथ देश की संपूर्ण वित्तीय व्यवस्था का नियंत्रक होता है।

नियुक्ति एवं कार्यकाल

नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। कार्यभार संभालने से पहले यह राष्ट्रपति के सम्मुख निम्नलिखित वचन/शपथ लेता है–

- भारत के संविधान के प्रति सत्यनिष्ठा के साथ वफादार रहेगा।
- भारत की एकता एवं अखंडता को अक्षुण्ण रखेगा।
- बिना किसी भेदभाव, डर आदि के अपने कर्त्तव्यों का संपूर्ण योग्यता, ज्ञान एवं न्याय के साथ निर्वहन करेगा।
- संविधान एवं कानून का पालन करेगा।

इसका कार्यकाल 6 वर्ष या 65 वर्ष की आयु तक होता है। इससे पहले वह राष्ट्रपति के नाम किसी भी समय अपना त्यागपत्र भेज सकता है।

स्वतंत्रता

- इसे कार्यकाल की सुरक्षा मुहैया कराई गई है। इसे केवल राष्ट्रपति द्वारा संविधान में उल्लिखित कार्यवाही के जरिए हटाया जा सकता है।
- इसका वेतन एवं अन्य सेवा शर्तें संसद द्वारा निर्धारित होती हैं। वेतन उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के बराबर होता है।
- नियुक्ति के बाद इसके वेतन, अधिकार, छुट्टियां, पेंशन, सेवानिवृत्ति की आयु में परिवर्तन नहीं किया जा सकता।
- महालेखा परीक्षक कार्यालय के वेतन, भत्ते, पेंशन आदि प्रशासनिक खर्चे भारत की संचित निधि पर भारित है।

कर्त्तव्य और शक्तियां

संसद एवं संविधान द्वारा स्थापित नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के कार्य एवं कर्त्तव्य निम्नलिखित हैं–

- केंद्र एवं राज्य सरकार द्वारा किए गए खर्चों का लेखा परीक्षण करता है।
- वह अन्य इकाइयों जैसे-निगम, कंपनियों आदि को केंद्र एवं राज्य राजस्व से मिलने वाली वित्तीय मदद का लेखा परीक्षण करता है।
- वह अन्य प्राधिकरणों जैसे स्थानीय इकाइयों के लेखा परीक्षण भी राष्ट्रपति या राज्यपाल के आग्रह पर करता है।
- केंद्र एवं राज्य के लेखा प्रपत्र विवरण को लेकर राष्ट्रपति को सलाह देता है।
- वह कर आदि को प्रमाणित एवं कार्यान्वित करता है।
- संसदीय समिति के सार्वजनिक लेखा मामलों के संबंध में वह दिशा निर्देशक, मित्र एवं दार्शनिक की तरह कार्य करता है।

वह राष्ट्रपति के सम्मुख तीन लेखा परीक्षण रिपोर्टों को रखता है :–

- आनुमानिक लेखा परीक्षण रिपोर्ट।
- वित्तीय खातों पर लेखा परीक्षण रिपोर्ट।
- सार्वजनिक उपक्रमों पर लेखा परीक्षण रिपोर्ट।

23. योजना आयोग व राष्ट्रीय विकस परिषद

1950 में भारत सरकार के कार्यकारी प्रस्ताव (केंद्रीय मंत्रिमंडल के तहत) के बाद योजना आयोग का गठन किया गया। इसका गठन 1946 में के.सी. नियोगी की अध्यक्षता में स्थापित सलाहकार योजना बोर्ड की संस्तुति के बाद किया गया। यह गैर-संवैधानिक एवं अतिरिक्त संवैधानिक इकाई है।

कार्य

योजना आयोग के कार्य निम्नलिखित हैं-

- प्रत्येक स्तर पर योजना के सफल अमल के लिए चीजों का निर्धारण।
- देश के संसाधनों का संतुलित उपयोग करते हुए सर्वोच्च प्रभावी योजना को बनाना।
- प्रमुखताओं का निर्धारण एवं उन संसाधनों को परिभाषित करना जिनमें इन योजनाओं को लागू किया जा सकता है।
- उन तथ्यों को चिह्नित करना जिससे आर्थिक विकास अवरूद्ध हो रहा हो।
- देश के पदार्थ, पूंजी और मानव संसाधनों का जायजा लेना और उनके संवर्धन की संभावना को तलाशना।

यह उल्लेखनीय है कि योजना आयोग केवल एक स्टाफ एजेंसी, एक सलाहकार निकाय है। इसकी कोई कार्यकारी जिम्मेदारी नहीं है। यह किसी निर्णय के अमल के लिए उत्तरदायी नहीं है।

गठन

योजना आयोग के गठन के संबंध में निम्न बिंदु उल्लेखनीय हैं-

- आयोग के पास चार से सात पूर्णकालिक निपुण सदस्य होते हैं। उन्हें राज्य मंत्री के समान दर्जा प्राप्त होता है।
- आयोग का एक सदस्य सचिव होता है।
- कुछ केंद्रीय मंत्रियों को आयोग के अंशकालिक सदस्यों के रूप में नियुक्त किया जाता है।
- आयोग का अध्यक्ष भारत का प्रधानमंत्री होता है। वह आयोग की बैठकों की अध्यक्षता करता है।
- आयोग का एक उपाध्यक्ष भी होता हैं। वह इसका कार्यकारी प्रमुख होता।

आंतरिक संगठन

योजना आयोग के निम्नलिखित तीन अंग होते हैं।

- कार्यक्रम सलाहकार।
- देख-रेख विभाग।
- तकनीकी विभाग।

तकनीकी विभाग

तकनीकी खंड, योजना आयोग की एक बड़ी क्रियात्मक निकाय है। यह मुख्यत: योजना निर्माण, योजना देख-रेख एवं योजना मूल्यांकन में शामिल रहती है।

देख-रेख विभाग

योजना आयोग की निम्नलिखित देख-रेख शाखाएं होती हैं-

- वैयक्तिक प्रशिक्षण शाखा।
- सांगठनिक शाखा।
- लेखा शाखा।
- सामान्य प्रशासन शाखा।
- सतर्कता शाखा।

कार्यक्रम सलाहकार

योजना आयोग में कार्यक्रम सलाहकार के पद का सृजन 1952 में किया गया। इसका सृजन इस उद्देश्य से किया गया कि योजना के क्षेत्र में भारत के राज्यों एवं योजना आयोग के बीच संपर्क बना रहे। इनका पद अतिरिक्त सचिव के समान होता है और यह कई राज्यों का प्रभारी होता है।

योजना आयोग के आंतरिक संगठन में दोहरा पदानुक्रम होता है- प्रशासनिक एवं तकनीकी। प्रशासनिक श्रेणियों का प्रमुख योजना आयोग का का सचिव होता है, तकनकी खंड का मुखिया सलाहकार होता है। जिसका रैंक अतिरिक्त सचिव या संयुक्त सचिव के बराबर होता है।

राष्ट्रीय विकास परिषद

राष्ट्रीय विकास परिषद (एनडीसी) का गठन अगस्त 1952 में किया गया। इसका गठन प्रथम पंचवर्षीय योजना (ड्राफ्ट निर्माण) में भारत सरकार की कार्यकारिणी की संतुति के बाद किया गया।

संगठन

राष्ट्रीय विकास परिषद में निम्नलिखित सदस्य होते हैं-

- भारत का प्रधानमंत्री (इसके अध्यक्ष या प्रमुख के रूप में)
- सभी केंद्रीय कैबिनेट मंत्री (1967 से)

- योजना आयोग के सदस्य।
- सभी केंद्रीशासित राज्यों के मुख्यमंत्री/प्रशासक।
- सभी राज्यों के मुख्यमंत्री।

योजना आयोग का सचिव राष्ट्रीय विकास परिषद के सचिव के रूप में कार्य करता है।

उद्देश्य

राष्ट्रीय विकास परिषद की स्थापना निम्नलिखित उद्देश्यों के तहत की गई-

- देश के सभी हिस्सों में संतुलित एवं तीव्र विकास को सुनिश्चित करने के लिए।
- योजना के सहयोग के लिए राष्ट्र के संसाधनों एवं प्रयासों को बढ़ाने एवं विस्तारित करने के लिए।
- विस्तृत संदर्भ में सामूहिक आर्थिक नीतियों को प्रोन्नत करने के लिए।
- योजना के कार्यान्वयन में राज्यों के सहयोग को सुरक्षित करने के लिए।

कार्य

उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए एनडीसी को निम्नलिखित कार्य दिए गए हैं-

- राष्ट्रीय योजना आयोग के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए पैमानों का निर्धारण करना।
- योजना के क्रियान्वयन में संसाधनों का अनुमान लगाना और सुझाव देना।
- योजना आयोग द्वारा बनाए गए राष्ट्रीय योजना की संस्तुति देना।
- राष्ट्रीय विकास को प्रभावित करने में महत्पूर्ण सामाजिक एवं आर्थिक नीतियों की संस्तुति करना।
- समय-समय पर राष्ट्रीय योजना के कार्यों की समीक्षा करना।
- राष्ट्रीय योजना को बनाने के लिए दिग्दर्शिता का सुझाव देना।

यद्यपि इसे योजना आयोग के सलाहकार निकाय के रूप में सूचीबद्ध किया गया है। यह अपनी संस्तुतियों को केंद्र एवं राज्य सरकारों को भेजती है। साल में दो बार इसकी बैठक होनी आवश्यक है।

राष्ट्रीय विकास परिषद का पहला एवं प्रमुख कार्य है- केंद्र, राज्य सरकार और योजना आयोग के बीच सेतु की तरह कार्य करना। खासतौर पर योजना के क्षेत्र में योजना कार्यक्रमों की नीतियों में समन्वय स्थापित करना।

EduBull.com

24. प्रमुख संविधान संशोधन अधिनियम

- **प्रथम संविधान संशोधन अधिनियम, 1951 :** इस संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद-19(2) मतें वर्णित स्वतंत्रता के अधिकारों पर **सार्वजनिक व्यवस्था, विदेशी राज्यों से मैत्रीपूर्ण संबंध** तथा **अपराध् उद्दीपन** के आधार पर प्रतिबंध लगाने का प्रावधान किया गया। इस अधिनियम द्वारा अनुच्छेद : 15, 31, 85, 87, 174, 176, 341, 372 और 376 को संशोधित किया गया। दो नये अनुच्छेद-31 (क) और 31 (ख) तथा एक नई अनुसूची (नवीं अनूसची) को संविधान में शामिल किया गया। अनुच्छेद-31 (क) के अन्तर्गत भूमि सुधार कानूनों को संवैधानिक सुरक्षा प्रदान किया गया। जबकि अनुच्छेद -31 (ख) के माध्यम से यह प्रावधान किया गया कि अनूसूची-9 में सम्मिलित अधिनियमों को न्यायालय में इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती कि वे मूलाधिकारों का अतिक्रमण करते हैं। अनुच्छेद-15 में खण्ड (2) जोड़ा गया जिसमें यह प्रावधान किया गया कि सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के हित में राज्य विशेष उपबंध कर सकता है।
- **सातवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1956 :** यह संशोधन राज्यों के पुनर्गठन के लिए किया गया। इस संशोधन द्वारा भारत को 14 राज्यों और 6 केन्द्र शासित प्रदेशों में बांटा गया।
- **आठवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1690 :** इस संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद -334 में संशोधन करके अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा आंग्ल-भारतीय समुदाय के सदस्यों के लिए संसद और राज्य विधानमंडलों में आरक्षण की अवधि को 10 वर्षों के लिए बढ़ा दिया गया।
- **दसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1961 :** इस संशोधन अधिनियम द्वारा दादर और नागरहवेली संघ शासित प्रदेश के रूप में भारत में सम्मिलित कर लिया गया।
- **बारहवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1962 :** इस संशोधन अधिनियम द्वारा गोवा, दमन और दीव को केन्द्र शासित प्रदेश के रूप में भारत में सम्मिलित कर लिया गया।
- **तेरहवां संविधान अधिनियम, 1962 :** इस संशोधन अधिनियम द्वारा नागालैण्ड को भारत के 16वें राज्य के रूप में सम्मिलित किया गया तथा संविधान में एक नया अनुच्छेद : 371 (क) जोड़कर नागालैण्ड के प्रशासन के सम्बन्ध में कुछ विशेष प्रावधान किया गया।
- **चौदहवां संविधान अधिनियम 1962 :** चौदहवां संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा पांडिचेरी को सेवानिवृत्ति की आयु सीमा को 60 वर्ष से बढ़ाकर 62 वर्ष कर दिया गया। पन्द्रहवें संशोधन द्वारा उच्च न्यायालयों के रिट सम्बन्धी अधिकारिता को भी बढ़ा दिया गया।
- **इक्कीसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1966:** इस संशोधन अधिनियम द्वारा 'सिंधी' भाषा को आठवीं अनुसूची की भाषाओं में स्थान दिया गया।
- **बाइसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1969 :** इस संशोधन अधिनियम द्वारा 'मेघालय' के रूप में एक नये राज्य का सृजन किया गया।
- **तेईसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1969 :** इस संशोधन अधिनियम द्वारा अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों एवं आंग्ल-भारतीय समुदाय के लिए संसद और राज्य विधायिकाओं में आरक्षण की अवधि को दस वर्षों के लिए और बढ़ा दिया गया।
- **चौबीसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1971 :** इस संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान के अनुच्छेद-13 और 368 में संशोधन करके यह स्पष्ट किया गया **कि संसद को मौलिक** अधिकारों सहित संविधान के किसी भी भाषा में संशोधन करने की असीमित शक्ति प्राप्त है।
- **पचीसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1971 :** इस संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद-31 (2) का संशोधन किया गया तथा एक नया अनुच्छेद -31 (ग) जोड़कर यह प्रावधान किया गया कि अनुच्छेद-39 (ख) और (ग) जोड़कर यह प्रावधान किया गया कि अनुच्छेद-39 (ख) और (ग) के नीति-निदेशक तत्वों को प्रभावी करने लिए कोई कानून बनाया जाता है तो उसे इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती कि उससे मूलाधिकारों का हनन होता है।
- **छब्बीसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1971 :** इस संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान के दो अनुच्छेदों-291 और 362 को संविधान से निकाल कर तथा एक नया अनुच्छेद-363 (ग) जोड़ कर भूतपूर्व राजाओं के प्रिवीपर्स

तथा विशेषाधिकारों को समाप्त कर दिया गया।

- **सत्ताईसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1971 :** इसके द्वारा संविधान में दो नये अनुच्छेद, अनुच्छेद-239 (ख) और 371 (ग) जोड़े गये जबकि दो अनुच्छेदों, अनुच्छेद-239 (क) और 240 का संशोधन किया गया। दो नये केन्द्र शासित प्रदेश मिजोरम और अरूणाचल प्रदेश का सृजन किया गया।
- **इकतीसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1974 :** इस संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद-81 में संशोधन करके लोकसभा में निर्वाचित सदस्यों की अधिकतम संख्या 525 से बढ़ाकर 545 कर दी गयी, जिसमें केन्द्र शासित प्रदेशों के 20 प्रतिनिधि होंगे।
- **छतीसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1975 :** इस संशोधन अधिनियम द्वारा सिक्किम को सह-राज्य के स्थान पर पूर्ण राज्य का दर्जा दिया गया। पैंतिसवें संविधान संशोधन द्वारा अंत: स्थापित अनुच्छेद-2 (क) और अनुसूचि-10 को संविधान से निकाल दिया गया।
- **सैंतीसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1975:** इस संशोधन अधिनियम द्वारा केन्द्र शासित प्रदेश अरुणाचल प्रदेश के लिए विधानसभा और मंत्रिपरिषद् का प्रावधान किया गया।
- **बयालिसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 :** बयालिसवां संविधान संशोधन को आपातकाल के दौरान पारित किया गया। यह अब तक का सबसे व्यापक और सर्वाधिक विवादास्पद संविधान संशोधन है। इस संशोधन द्वारा संविधान के अनेक उपबंधों में व्यापक परिवर्तन किये गये।
- इस संशोधन द्वारा संविधान की प्रस्तावना में तीन नये शब्द- **'धर्म'निरपेक्ष', 'समाजवाद'** तथा **'अखण्डता'** जोड़े गये।
- संविधान के भाग-4 में तीन नये नीति-निदेशक तत्व जोड़े गये-(i) सामान्य न्याय और नि: शुल्क विधिक सहायता (ii) उद्योगों के प्रबंध में श्रमिकों की भागीदारी, और (iii) पर्यावरण की रक्षा तथा सुधार और वन तथा वन्य जीवों को सुधार।
- अनुच्छेद -31 (ग) में संशोधन करके मूल अधिकारों पर सभी नीति-निदेशक तत्वों को प्राथमिकता प्रदान की गई।
- एक नया भाग, **भाग-4 (क)** जोड़ा गया, जिसमें नागरिकों के **10 मूल कर्त्तव्यों** का उल्लेख है।
- अनुच्छेद-74 में संशोधन करके राष्ट्रपति के लिए मंत्रिपरिषद के सलाह को बाध्यकारी बना दिया गया।
- लोकसभा तथा राज्य विधानसभाओं के कार्यकाल को एक वर्ष के लिए बढ़ाकर 6 वर्ष कर दिया गया।
- यह प्रावधान किया गया कि संसद द्वारा संविधान के किसी भी भाग में किये गये संशोधन को न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती।
- संविधान में एक नया अनुच्छेद-139 (क) जोड़ा गया, जिसके अन्तर्गत सर्वोच्च न्यायालय को यह शक्ति प्रदान की गयी कि वह सार्वजनिक महत्व के महत्वपूर्ण मामले को उच्च न्यायालयों से अपने पास मंगवा सकता है।
- केन्द्र को यह शक्ति प्रदान की गयी कि वह राज्यों में विधि और व्यवस्था की गंभीर परिस्थिति का सामना करने के लिए केन्द्रीय सुरक्षा बल को भेज सकता है।
- सातवीं अनुसूचि के राज्य सूची के कुछ विषयों को समवर्ती सूची में डाल दिया गया।
- संविधान में दो नया अनुच्छेद - 323 (क) और 323 (ख) जोड़कर संसद को विभिन्न प्रकार के अधिकरणों की स्थापना की शक्ति प्रदान की गयी।
- अनुच्छेद-352 में संशोधन करके यह प्रावधान किया गया कि आपातस्थिति की उद्घोषणा देश के किसी भाग के लिए भी की जा सकती है।
- अनुच्छेद-356 में संशोधन करके राज्यों में राष्ट्रपति शासन की प्रारंभिक अवधि को 6 महीने से बढ़ाकर 1 वर्ष कर दिया गया।
- **चौवालिसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 :** 42वें संविधान द्वारा किये गये व्यापक परिवर्तनों को निरसित करने के उद्देश्य से जनता सरकार ने 44वां संविधान संशोधन अधिनियम पारित किया।
- इसके द्वारा सम्पत्ति के मूल अधिकार को मूल अधिकारों की सूची से निकालकर एक नये अनुच्छेद-300 (क) में **कानूनी अधिकार** के रूप में रखा गया।
- **लोकसभा तथा राज्य विधान सभा की अवधि को पुन:** 6 वर्ष के स्थान पर पांच वर्ष कर दिया गया।
- अनुच्छेद-352 के अधीन राष्ट्रीय आपातकाल की उद्घोषणा के लिए **'आंतरिक अशांति'** के स्थान पर **'संशस्त्र विद्रोह'** शब्द रखा गया अर्थात् सशस्त्र विद्रोह से आन्तरिक अशांति उत्पन्न होने पर ही राष्ट्रीय आपातकाल की उद्घोषणा की जा सकती है।

- मंत्रिमंडल के लिखित परामर्श पर ही राष्ट्रीय आपातकाल की उद्घोषणा की जा सकेगी।
- अनुच्छेद : 356 के अधीन राष्ट्रपति शासन की प्रारंभिक अवधि 1 वर्ष के स्थान पर पुनः 6 माह कर दिया गया।
- राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के निर्वाचन सम्बन्धी विवादों को हल करने के लिए उच्चतम न्यायालय को पुनः अधिकारिता प्रदान की गयी।
- 42वें संशोधन द्वारा मंत्रिमण्डल के सलाह को राष्ट्रपति के लिए बाध्यकारी बना दिया गया था, लेकिन 44वें संशोधन में यह व्यवस्था की गयी कि राष्ट्रपति मंत्रिमण्डल के सलाह बाध्यकारी होगा।
- निवारक निरोध कानून के आधार पर किसी व्यक्ति को दो माह की अवधि के लिए ही नजरबन्द किया जा सकता है, लेकिन सलाहकार बोर्ड के परामर्श पर यह अवधि बढ़ाई जा सकती है।
- **पैंतालीसवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1980** : इस संशोधन अधिनियम द्वारा लोकसभा और राज्य विधानसभा में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों तथा आंग्ल-भारतीय समुदाय के आरक्षण की अवधि को 10 वर्षों के लिए और बढ़ा दिया गया।
- **इक्यावनवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1984** : इस संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद-330 में संशोधन करके मेघालय, अरुणाचल प्रदेश, नागालैण्ड और मिजोरम के अनुसूचित जनजातियों के लिए लोंकसभा के स्थान आरक्षित किये गये। नागालैण्ड तथा मेघालय की विधानसभाओं में भी अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित किये गये और इसके लिए अनुच्छेद-332 में संशोधन किया गया।
- **बावनावां संविधान संशोधन अधिनियम, 1985** : इस संशोधन अधिनियम द्वारा दल-परिवर्तन को रोकने के लिए प्रावधान किये गये।
- **पचपनवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1986** : इस संशोधन अधिनियम द्वारा केन्द्र शासित प्रदेश अरुणाचल प्रदेश को राज्य का दर्जा प्रदान किया गया।
- **छप्पनवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1987** : इस संशोधन अधिनियम द्वारा गोवा को दमन और दीव से अलग करके राज्य का दर्जा प्रदान किया गया, जबकि दमन और दीव को केन्द्र शासित प्रदेश बनाया गया। गोवा के लिए 30 सदस्यीय विधानसभा के गठन का प्रावधान किया गया।
- **इकसठवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1989** : अनुच्छेद 326 का संशोधन करके मताधिकार की न्यूनतम आयु सीमा को **21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष** कर दिया गया।
- **बासठवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1989** : इस संशोधन अधिनियम द्वारा लोकसभा और राज्यों की विधनसभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों तथा आंग्ल भारतीय समुदाय के लोगों के लिए आरक्षण की अवधि को 10 वर्षों के लिए और बढ़ा दिया गया।
- **इकहत्तरवां संविधान संशोधन अधिनियम 1992** : इस संशोधन अधिनियम द्वारा तीन नये भाषाओं -**कोंकणी, मणिपुरी** और **नेपाली** को संविधान की आठवीं अनुसूची में स्थान दिया गया।
- **तिहत्तरवां संविधान संशोधन अधिनियिम, 1992** : इस संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान में एक नया **भाग-9** तथा **अनुच्छेद-243 क से 243 ण** तक 16 नये अनुच्छेद और एक नयी अनुसूची **11वीं अनुसूची** जोड़कर पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया।
- **चौहत्तरवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1992** : इस संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान में एक नया **भाग-9 क** तथा अनुच्छेद -243 से 243 य छ तक 18 नये अनुच्छेद और एक नयी अनुसूची, बारहवीं अनुसूची जोड़कर नगरीय स्थानीय शासन के संबंध में विस्तृत प्रावधान किये गये।
- **छिहत्तरवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1994** : इस संशोधन अधिनियम द्वारा तमिलनाडु सरकार द्वारा पारित उस अधिनियम को संविधान की नवीं अनुसूची में शामिल कर लिया गया। जिसमें पिछड़े वर्गों के लिए 69 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया गया है।
- **सतहत्तरवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1995** : इस संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद -16 में एक नया खण्ड-4 (क) जोड़कर राज्याधीन सेवाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए पदोन्नति में आरक्षण की व्यवस्था की गयी।
- **चौरासीवां संविधान संशोधन अधिनियम, 2001** : इस संशोधन अधिनियम द्वारा लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में सीटों की संख्या को 2026 तक यथावत बनाये रखने का प्रावधान किया गया।
- **पिचायासीवां संविधान संशोधन अधिनियम, 2001:** इस संशोधन अधिनियम द्वारा अनुसूचित जाति और जनजाति के लिए सरकारी नौकरियों में पदोन्नति में आरक्षण की व्यवस्था की गई।

- **छियासीवां संविधान संशोधन अधिनियम, 2001 :** सभी के लिए शिक्षा' के लक्ष्य को प्राप्त करने के उद्देश्य से यह संविधान संशोधन पारित किया गया ताकि 6-14 वर्ष की आयु के बच्चों के लिए निः शुल्क और अनिवार्य शिक्षा को मूल अधिकार में सम्मिलित किया जा सके।
- **सतासीवां संविधान संशोधन अधिनियम, 2003 :** निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन सन् 2001 की जनगणना के आधार पर किया गया।
- **इक्यानवेवां संविधान संशोधन अधिनियम, 2003 :** इसमें दलबदल-विरोधी कानून में संशोधन किया गया है। इसके अतिरिक्त प्रावधान भी किया गया है कि केन्द्र और राज्य सरकारें अपने-अपने मन्त्रिमण्डल में मन्त्रियों की संख्या लोकसभा और विधान सभा की सीटों के 15% से ज्यादा नहीं कर सकतीं हैं।
- **बानवेवां संविधान संशोधन अधिनियम, 2003 :** इसमें आठवीं अनुसूची में चार और भाषाओं-मैथिली, डोगरी, बोडो और सन्थाली, को जोड़ा गया है।
- **तिरानवेवां संविधान संशोधन अधिनियम, 2006 :** इसमे अहत गैर-सहायता प्राप्त निजी शिक्षण संस्थाओं में आरक्षण की सुविधा प्रदान की गई है इसे अनुच्छेद 15 में जोड़ा गया है।
- **पिनचयानवेवां संविधान संशोधन अधिनियम, 2009 :** लोक सभा एवं राज्य विधान सभाओं में अनुसूचित जातियों, जनजातियों के लिए चुनावी सीटों के आरक्षण तथा आंग्ल भारतीय सदस्यों के मनोनयन की व्यवस्था को 26 जनवरी, 2010 से आगामी दस वर्ष के लिए और बढ़ा दिया है।
- **छियानवेवां संविधान संशोधन अधिनियम, 2010 :** 'उड़िया शब्द के स्थान पर **'ओड़िया'** किया गया।
- **सन्तानवेवां संविधान संशोधन अधिनियम, 2011 :** कोऑपरेटिव सोसाइटीज के निर्माण की स्वतन्त्रता मौलिक अधिकारों में सम्मिलित की गई। नीति निर्देशक तत्वों में कोऑपरेटिव सोसाइटीज के गठन प्रबन्धन आदि के प्रोत्साहन को सम्मिलित किया गया।

EduBull.com